ओपन एंड डिस्टैंस लर्निंग विभाग
पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला

कक्षा : एम.ए. भाग-1 *सैमेस्टर-2*
पत्र : चौथा (विकल्प-1 हिन्दी कथा साहित्य) एकांश संख्या : 1
माध्यम : हिन्दी

पाठ नं.

पाठ संख्या–1.1 हिन्दी उपन्यास का सामान्य परिचय, उपन्यास परंपरा में मुंशी प्रेमचंद का स्थान

पाठ संख्या–1.2 'गोदान' – कथानक

पाठ संख्या–1.3 'गोदान' पात्र तथा चरित्र–चित्रण

पाठ संख्या–1.4 'गोदान' का संरचनात्मक विवेचन–संवाद, देशकाल तथा वातावरण, भाषा–शैली

पाठ संख्या–1.5 'गोदान' में आदर्शवाद, यथार्थवाद, ग्रामीण तथा नगरीय जीवन की प्रमुख समस्याएं

पाठ संख्या–1.6 'गोदान' का उद्देश्य, महाकाव्यत्व और प्रमुख स्थलों की सप्रसंग व्याख्या।

Department website : www.pbidde.org

पाठ संख्या–1.1

हिन्दी उपन्यास : सामान्य परिचय

रूपरेखा

1.1.0 उद्देश्य

1.1.1 प्रस्तावना

1.1.2 हिन्दी उपन्यास – सामान्य परिचय

1.1.3 उपन्यास परंपरा में मुंशी प्रेमचन्द का स्थान

1.1.4 सारांश

1.1.0 उद्देश्य :

मुंशी प्रेमचन्द हिन्दी और उर्दू के प्रसिद्ध उपन्यासकार और कहानीकार थे। उपन्यास जगत् में उनका आगमन एक युगान्तकारी घटना है। प्रेमचन्द जी ने ही उपन्यास को जीवन और समाज के व्यापक सत्य से जोड़ा था। प्रस्तुत अध्याय के माध्यम से विद्यार्थीगण मुंशी प्रेमचन्द जी के जीवन के साथ–साथ उपन्यास परंपरा में उनके स्थान से भी परिचित हो पाएंगे।

1.1.1 प्रस्तावना :

मुंशी प्रेमचन्द जी का वास्तविक नाम धनपतराय श्रीवास्तव था। उनका जन्म 31 जुलाई, 1880, लमही वाराणसी में हुआ। उनका निधन 8 अक्तूबर 1936 वाराणसी में हुआ था। पत्नी का नाम शिवरानी देवी था। इनके पिता जी मुंशी अजायब लाल और माता आनन्दी देवी थी। इनका बचपन गाँव में ही बीता। इन्हें पढ़ने लिखने का शौक था। जीवन में गरीबी और प्रतिकूल परिस्थितियों से संघर्ष करते–करते इन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से अंग्रेज़ी साहित्य, पर्सियन और इतिहास विषयों से सनातक की उपाधि द्वितीय श्रेणी में प्राप्त की थी। मुंशी जी बहुमुखी प्रतिभा संपन्न साहित्यकार थे। अपनी रचनाओं में उन्होंने साधारण जनता की भावनाओं, परिस्थितियों और समस्याओं का स्वाभाविक चित्रण किया है। उन्होंने उपन्यास, कहानी, नाटक, समीक्षा, लेख,

संपादकीय, संस्मरण इत्यादि अनेक विधाओं में अपनी लेखनी का लोहा मनवाया है किन्तु मुख्य रूप से वे हैं तो कथाकार ही।

1.1.2 हिन्दी उपन्यास – सामान्य परिचय

हिन्दी साहित्य के उपन्यास जगत में प्रेमचन्द का आगमन एक युगान्तकारी घटना है। उन्होंने अपने उपन्यास–साहित्य द्वारा हिन्दी कथा–साहित्य को नयी अर्थवत्ता प्रदान की। वह एक नयी दृष्टि लेकर आए और दैनिक जीवन की घटनाओं तथा समस्याओं को बड़ी सहज तथा सरल भाषा में प्रस्तुत किया। प्रेमचन्द ने साहित्य को मूलतः जीवन की आलोचना माना और अपनी रचनाओं में सामाजिक जीवन तथा परिवेश को गहराई से समझकर उसकी प्रवृत्तियों का चित्रण किया। उनके उपन्यासों का क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत है जिसमें निम्नवर्ग तथा मध्यवर्गीय की विशेषताओं का सांगोपांग चित्रण भी किया। वह स्वयं भी मध्यवर्गीय व्यक्ति थे और उसकी कमजोरियों से भली–भांति परिचित थे। प्रेमचन्द हिन्दी के पहले उपन्यासकार हैं जिन्होंने विस्तृत फलक पर मध्यवर्ग तथा निम्नवर्ग को बड़ी इमानदारी से अपने उपन्यास साहित्य में प्रस्तुत किया। इनकी रचनाओं की केन्द्रीय भावना मुख्यतः सामाजिक रही है जिसमें जीवन का अध्ययन करते हुए राजनैतिक, आर्थिक और धार्मिक आदि परिस्थितियों का वर्णन करना आवश्यक माना। प्रेमचंद ने दुखी जनता के दुख–दर्द के तटस्थ दर्शक मात्र नहीं रहे बल्कि उससे अभिन्न हो गए। इस दुखी वर्ग की वेदना को उन्होंने स्वयं अनुभव किया। वह साहित्य को मानव संस्कार का एक सशक्त साधन माना। मानव मन को परिष्कृत करना, उसमें सुरुचि और सौन्दर्यबोध की शक्ति जगाना साहित्य का लक्ष्य होना चाहिए।

इनसे पूर्व उपन्यास में दो तत्व प्रधान थे–घटना संयोजन का कौशल और अभिव्यंजना की सादगी। घटनाओं के आयोजन में प्रेमचन्द ने मानव जीवन के विविध पक्षों की विवृत्ति और मानवीय चरित्रों के उद्घाटन को आवष्यक माना। प्रेमचन्द की गहरी संवेदना और व्यापक सहानुभूति की आँच में तपकर कला एवं वस्तु–तत्त्व का सहज समन्वय हो जाता है। उन्होंने उर्दू में लिखना आरंभ किया था और इनका पहला नाम धनपत राय था जिसे कद में इन्होंने प्रेमचन्द में बदल लिया। प्रेमचन्द काल भारतीय सामाजिक, राजनैतिक तथा ऐतिहासिक दृष्टि से गहरी उथल–पुथल का काल था। प्रेमचन्द की राष्ट्रीय तथा सामाजिक चेतना बहुत प्रबुद्ध एवं उदार थी। वह गतिशील

दृष्टि–सम्पन्न थे। उनके साहित्य में मजदूरों, किसानों, दलितों एवं शोषितों के प्रति असीम स्नेह एवं सहानुभूति मिलती है। उन्होंने अपने युग की पूरी पीढ़ी को गहराई से समझा और उस अनुभव को अपने साहित्य में प्रस्तुत किया। उन्हें हिन्दी उपन्यास साहित्य के प्रवर्तक माना जाता है। इनके दस उपन्यास प्रकाशित हुए हैं– 'सेवासदन', 'प्रतिज्ञा', 'वरदान', 'प्रेमाश्रम', 'निर्मला', 'रंगभूमि', 'कायाकल्प', 'गबन', 'कर्मभूमि' और 'गोदान'। इनका अंतिम उपन्यास था 'मंगलसूत्र' जो इनकी मृत्यु हो जाने के कारण अधूरा रह गया था और इसे इनके पुत्र अमृतराय ने पूरा किया। प्रेमचन्द ने अपने उपन्यासों में अपने समय की सभी–परिस्थितियों एवं समस्याओं को अभिव्यक्ति दी। इनका समस्या–चित्रण यथार्थ है पर उसका समाधान आदर्शवादी एवं कल्पित हुआ करता है। इनकी रचनाओं में विषयों की व्यापकता एवं विस्तार के कारण उनका विवेचन भी विस्तृत है। इनके द्वारा दिए गए समाधान गांधीवाद से प्रभावित होते हैं। इनके साहित्य में क्रांतिकारी स्वर कम और आदर्शवाद अधिक मिलता है। 'गोदान' उपन्यास में इनका यथार्थवाद भी परिलक्षित होता है। यह उनकी प्रौढ़ तथा अंतिम रचना है।

1.1.3 उपन्यास परंपरा में मुंशी प्रेमचन्द का स्थान :

हिन्दी उपन्यास साहित्य को वास्तविक रूप देने का श्रेय मुंशी प्रेमचन्द जी को है। हिन्दी उपन्यासों की पहले से ही कोई परंपरा नहीं थी। उन्होंने परंपरा का निर्माण किया। उन्होंने जीवन की सार्थकता को उपन्यास साहित्य के माध्यम से प्रस्तुत किया। 'गोदान' मुंशी प्रेमचन्द का महत्वपूर्ण उपन्यास है। इससे पहले के उपन्यासों में इनका दृष्टिकोण आदर्शवादी रहा है। होरी के माध्यम से इन्होंने कृषक जीवन की जिस सच्चाई को चित्रित किया है, वह पूरी तरह यथार्थवादी है। वीरेन्द्र यादव जी लिखते हैं – ''1936 में 'गोदान' का प्रकाशन हिन्दी उपन्यास का एक नया प्रस्थान बिन्दु था, वही आज भी इसका प्रासंगिक बना रहना इसके कालजयी होने का प्रमाण है। होरी सरीखे किसानों की त्रासदी के संदर्भ तब चाहे जितने भिन्न रहे हों, लेकिन किंचित बदले हुए स्वरूप में वे आज भी मौजूद हैं। खेती का दिनों दिन अनुप्पादक होते जाना, किसान की अपनी बेदखली, कृषि मजदूरों का शहर की ओर पलायन, किसान से मज़दूर होने की प्रक्रिया और जीवित रहने का संघर्ष जिस तरह आज वैश्वीकृत भारत का यथार्थ है, वह एक नए 'गोदान' की जरूरत दरपेश करता है।.. सच है कि होरी देशज सत्ता–संरचना से ही उत्पीड़ित था। उसे खेत से बेदखल करने वाले गाँव

के पुरोहित और मुखिया थे। होरी की त्रासदी के मूल में दो घटनाएँ थीं–द्वार पर खूँटे से बंधी गाय का मरना और बेटे गोबर द्वारा गैर–बिरादरी की विधवा झुनिया को पत्नी के रूप में अपनाना। होरी इन दोनों घटनाओं के लिए उत्तरदायी नहीं था। लेकिन वर्णाश्रम व्यवस्था में शूद्र होने की नियति के चलते उसे धर्म, बिरादरी, मरजाद के बंधनों में जकड़कर पहले जुर्माना और डांड़ के बहाने कर्ज के जाल में फंसाया गया। फिर उसकी जमीन जायदाद गिरवी रखकर किसान से मजदूर होने के लिए बाध्य किया गया। यहाँ प्रेमचन्द भारतीय समाज की उस विभेदकारी जातिगत संरचना को बेपर्दा करते हैं, जो आज के भारत का सच है।''

हिन्दी उपन्यास–परम्परा में प्रेमचंद का विशेष स्थान हैं। इन्होंने अपने पूर्ववर्ती लेखकों से विषयवस्तु लेकर उसे नवीन ढंग से प्रस्तुत किया। इनसे पूर्व भारतेन्दु युगीन लेखकों ने जिन सामाजिक बुराईयों का चित्रण किया था उसमें व्यक्त सामंती–मूल्य दृष्टि पर प्रेमचंद ने गहरी चोट की। वह पहले ऐसे लेखक थे जिन्होंने एक विकसित कला–रूप के तौर पर उपन्यास की प्रतिष्ठा की। उन्होंने उपन्यास को सामाजिक तथा राष्ट्रीय सवालों के साथ जोड़ा और उसका विकास किया। प्रेमचन्द सन् 1918 में 'सेवा सदन' के साथ हिन्दी उपन्यास साहित्य में आए और 1936 में 'गोदान' के प्रकाशन के कुछ वर्ष बाद उनका निधन हो गया। दो दषकों से भी कम का यह कालखंड हिन्दी उपन्यास के कलात्मक उत्कर्ष की दृष्टि से बहुत आश्चर्यजनक एवं महत्त्वपूर्ण कहा जा सकता है। प्रेमचन्द के उपन्यासों में संगठित कथानक, विकसित पात्र, पात्रानुकूल संवाद और अद्‌भुत मूल्य–दृष्टि मिलती है। उन्होंने अपनी रचनाओं में विभिन्न सामाजिक समस्याओं–स्त्री शिक्षा, बाल विवाह तथा अनमेल विवाह का विरोध, वेश्यावृत्ति आदि पर विचार किया। विभिन्न उपन्यासों की रचना–यात्रा में उन्होंने अपने ही अनुभव से बहुत कुछ सीखा। अपने निबन्ध 'उपन्यास' में उन्होंने आदर्श और यथार्थ के सवाल पर विचार किया। वे लिखते हैं–''यथार्थवादी चरित्रों को पाठक के सामने उनके यथार्थ नग्न रूप में रख देता है। उसे इससे कुछ मतलब नहीं कि सच्चरित्रता का परिणाम बुरा होता है या कुचरित्रता का परिणाम अच्छा.......यथार्थवाद हमारी दुर्बलताओं, हमारी विषमताओं और हमारी क्रूरताओं का नग्न चित्र होता है और इस तरह यथार्थवाद हमको निराशावादी बना देता है, मानव चरित्र पर से हमारा विश्वास उठ जाता है, हमको इसी समझ के कारण वे आदर्श और यथार्थ को मिला कर ''आदर्शोन्मुख यथार्थवाद'' का निर्माण करते हैं। वे मानते हैं कि –

''उपन्यासकार की सबसे बड़ी विभूति ऐसे चरित्रों की सृष्टि है, जो अपने सद्व्यवहार और सद्विचार से पाठक को मोहित कर ले। जिस उपन्यासकार में यह गुण नहीं, वह दो कौड़ी का है।''

वस्तुतः प्रेमचन्द ने उपन्यास को जीवन और समाज के व्यापक सत्य से जोड़ा। मानव चरित्र की संभावनाओं को उपन्यास से जोड़कर एक ओर यदि उन्होंने उपन्यास को इकहरे और स्थूल पात्रों से बचा कर सजीव मानव की प्रतिष्ठा की और साथ ही उसका मनोवैज्ञानिक अध्ययन भी किया। उन्होंने मध्यवर्ग के जीवन के वास्तविक चित्र दिए। मुख्य रूप से उन्होंने एक खेतिहर देष के रूप भारत की पहचान को स्वीकृति दी और उपन्यास को दो बुनियादी वर्गों–किसान तथा मजदूर से जोड़ा। प्रेमचंद के उपन्यासों पर विचार करने पर उनके क्रांतिकारी महत्त्व को बड़ी सरलता से समझा जा सकता है। उन्होंने सनातन हिन्दू आदर्शों के गरिमापूर्ण बखान का रास्ता छोड़कर उनकी जड़ता और अन्तर्विरोध का उद्घाटन किया और उनकी संवेदनहीनता पर गहरी चोट की। उन्होंने साम्प्रदायिक सहयोग और सद्भावना के महत्त्व को गंभीरता से समझा और उसे महत्त्व दिया। उपन्यास की भाषा और रचना–तंत्र के संदर्भ में कहा जा सकता है कि उनका काल अभूतपूर्व उपलब्धियों और विकास का काल कहा जा सकता है। प्रेमचन्द से ही वस्तुतः उपन्यास को स्वीकार्यता प्राप्त हुई।

प्रेमचन्द ने हिन्दी उपन्यास साहित्य को कल्पना लोक से खींच कर यथार्थ की भूमि पर खड़ा किया। उनके उपन्यासों में यथार्थ की विकृतियों के साथ–साथ भारतीय सभ्यता और संस्कृति के प्रति न्यूनाधिक आग्रह और सुधारवादी प्रवृत्तियों का सम्मिलित प्रभाव परिलक्षित होता है। प्रेमचन्द के उपन्यासों में दीन–हीन पद् दलित किसानों–मजदूरों की सामाजिक आर्थिक दुर्दशा, शोषण और मान्यताओं का उल्लेख हुआ है। तत्कालीन सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक मान्यताओं के परिप्रेक्ष्य में सामाजिक बदलाव को वाणी प्राप्त हुई। भारतीय सर्वहारा की मूक क्रांति, नैतिक आक्रोष और जीवन के अधिकारों के प्रति संघर्ष का प्रयत्न इनके उपन्यासों के विषय हैं। प्रेमचन्द ने इन विषयों पर गहराई से चिन्तन किया। उन्होंने जीवन और उसकी समस्याओं का चित्रण करते हुए पात्रों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत किया। प्रेमचन्द की पूरी साहित्य यात्रा में किसानों, दलितों तथा पीड़ितों की पीड़ा, उसके अन्तर्विरोध और विद्रोह, जागरूकता, पूंजीवादी शासन–तंत्र के

अनैतिक, अमानवीय षड्यन्त्र और सामाजिक व्यवस्था पर निर्मम प्रहार ही किसान का यथार्थ रूप प्रकट करता है।

हिन्दी के महान कथाकार प्रेमचंद आज भी प्रासंगिक हैं। जबकि उनका शिल्प, भाषा और अभिव्यक्ति का अंदाज आज 'पुराना' पड़ गया है पर हिन्दी कथा साहित्य के लिए वे एक प्रस्थान बिन्दु की तरह हैं। उन्होंने हर स्तर पर अपने नवीन मानक स्थापित किए। उनका साहित्य विश्व की हर भाषा में अनूदित हुआ है।

प्रेमचन्द ने अपनी कहानियों और उपन्यासों में औद्योगिकीकरण और पूंजीवाद के बढ़ते प्रभावों, किसान या मजदूरों की समस्याओं, जातिप्रथा अंधविश्वासों एवं सर्वहारा के शोषण की समस्याओं को उठाया। उन्होंने कलम का सिपाही बन कर राजनैतिक, सामाजिक तथा आर्थिक शोषणों के खिलाफ ऐसी जोरदार लड़ाई लड़ी जो उनके बाद भी जारी रही और आज भी चल रही है। प्रेमचन्द के समय देश का एक बड़ा वर्ग मध्ययुगीन संस्कारों का पोषक था और आदर्श तथा यथार्थ के बीच एक द्वन्द्व विद्यमान था। प्रेमचन्द का विश्वास था कि आने वाले समय में इस वर्ग का अवश्य सुधार होगा।

प्रेमचन्द ने हिन्दुस्तानी भाषा का प्रयोग किया क्योंकि वही एकमात्र ऐसी भाषा थी जो सहज और सरल रूप में सभी को समझ आ सकती थी। शुरू में उन्होंने उर्दू में लिखा और बाद में हिन्दुस्तानी का प्रयोग किया। उनके उर्दू उपन्यास 'बाजारेहुसन', 'गोशाए आफियत' और 'चौगाने हस्ती' का हिन्दी में अनुवाद क्रमशः सेवासदन, प्रेमाश्रम और रंगभूमि शीर्षक से हुआ। परिस्थिति के अनुसार अपने विचारों में निरन्तर संशोधन और परिवर्तन करते रहे। उन्होंने युगीन संदर्भों के आधार पर ही संघर्ष का रास्ता–तलाशने एवं वर्ग चेतना का निर्माण करने का प्रयास किया। वे अन्याय, आतंक और शोषण के साये में पल रही सामाजिक व्यवस्था को पूरी तरह बदल देना चाहते थे जो आज के समय की भी प्रमुख माँग है।

1.1.4 सारांश :

मुंशी प्रेमचन्द जी ने अपने जीवन में अनेकों अद्भुत कृतियों की रचना की है। उनके जैसा अन्य कोई साहित्यकार शायद ही कोई हो। अपने जीवन के अंतिम दिनों के एक वर्ष को छोड़कर

उन्होंने पूरा समय वाराणसी और लखनऊ में बिताया, वहीं उन्होंने अनेक पत्र–पत्रिकाओं का संपादन किया और अन्य साहित्य सृजन करते रहे। उनका निधन 8 अक्तूबर 1936 को हुआ।

पाठ संख्या–1.2

'गोदान' का कथानक

रूपरेखा

1.2.0 उद्देश्य

1.2.1 प्रस्तावना

1.2.2 गोदान का कथानक

1.2.3 गोदान : कथानक विवेचन

1.2.4 सारांश

1.2.0 उद्देश्य :

कथानक से भाव है रचना की मुख्य कथा या कहानी जिसे हम कथावस्तु भी कह सकते हैं। किसी भी रचना को समझने के लिए उसके मूल पाठ को पढ़ना आवश्यक होता है जिससे हम उसकी कथावस्तु को समझ सकते हैं। 'गोदान' मुख्य रूप से एक गरीब भारतीय किसान की जीवनगाथा है जिसने अपना सारा जीवन भूख, दरिद्रता एवं दासता में व्यतीत किया। उसके जीवन की एक ही साध थी कि उसके पास एक गाय हो। मृत्यु के समय वह उस गाय का दान करके मुक्ति की प्राप्ति कर सके। सारा जीवन वह इस साध को पूरा करने के लिए संघर्ष करता रहा पर वह पूरी न हो सकी।

1.2.1 प्रस्तावना :

प्रेमचन्द ने इस रचना में भारतीय किसान के जीवन की मजबूरियों का विस्तृत वर्णन किया है। 'गोदान' प्रेमचन्द की अन्तिम तथा श्रेष्ठतम रचना है। इसे भारतीय किसान के जीवन का महाकाव्य भी कहा गया है। प्रेमचन्द के सभी उपन्यासों का वर्ण्य–विषय अधिकांशतः सामाजिक है। सामाजिक जीवन की प्रमुखता के अन्तर्गत वैयक्तिक जीवन का उल्लेख अंशतः ही हो पाया है वह अपनी रचनाओं में विविध सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों, स्थितियों, आन्दोलनों और समस्याओं का मार्मिक चित्रण करते हो। किसान का आर्थिक शोषण, अछूतों की करूणाजनक जीवन–कथा, राजनीतिक परतन्त्रता के दुष्परिणाम, नवीन पूंजीवादी व्यवस्था से उत्पन्न होने वाला नये प्रकार का शोषण, आर्थिक विषमता के कारण होने वाली चारित्रिक दुर्बलताएं तथा नयी पूंजीवादी व्यवस्था से उदभूत वर्ग–संघर्ष के संकेत प्रेमचन्द के सब उपन्यासों में मिलते हैं। पर सब उपन्यासों में प्रेमचन्द कथा का अन्त उपदेश, सुधार, आश्रम–स्थापना,

हृदय–परिवर्तन आदि द्वारा करके कथा को अवास्तविक और अविश्वसनीय बना देते हैं। पर 'गोदान' इस दृष्टि से पूरी तरह से न सही, अंशतः भिन्न प्रकार की रचना है।

'गोदान' में सभी समाज और सामाजिक समस्याओं को प्रमुखता प्राप्त हुई है, परन्तु 'गोदान' के अन्त में प्रेमचन्द ने अपने पूर्वकालीन उपन्यासों में प्रस्तावित समाधान के प्रति मोहभंग को सूचित किया। इस उपन्यास में प्रेमचन्द यथार्थ को अधिक तर्कसंगत दृष्टि से देखते प्रतीत होते हो। इस कृति का अन्त अत्यन्त हृदयद्रावक है। इसमें प्रेमचन्द का जीवन अनुभव और उनकी कला का निखरा हुआ रूप हमें प्राप्त होता है। इसमें वे चारों ओर के जीर्ण–शीर्ण और विश्रृंखल होते हुए सामाजिक कार्यों द्वारा इस समाज का व इस समाज घटकों का कल्याण सम्भव नहीं मानते। इनमें आमूल परिवर्तन ही एकमात्र इलाज है। होरी इसी समाज की उपज है, पर सामन्तों, पूंजीवादियों, धर्म के ठेकेदारों आदि से वह महान है। इस समाज में यह लोक और परलोक सब पैसे वालों का ही है, अतः होरी इस चक्की में पिस जाता है। वह समाज को चुनौती देकर चला जाता है। उसकी यह चुनौती जीवन के प्रत्येक क्षेत्र से सम्बन्धित, पीड़ित और दलित व्यक्ति की चुनौती है। वह होरी की समस्याओं के कल्पित तथा मनोहर समाधान प्रस्तावित करने के बजाय उसे यथार्थ में टूटने और पराजित होने देते हो। पर होरी के इसी टूटने और पराजित होने में ही प्रेमचन्द उसकी विजय स्वीकार करते हैं। हिन्दी उपन्यास तथा विशेष रूप से 'गोदान' की इन्हीं विशेषताओं के कारण आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी कहते हो–"अगर आप उत्तर भारत की समस्त जनता के आचार–विचार, भाषा–भाव, रहन–सहन, आशा–आकांक्षा, दुःख–सुख और सूझबूझ को जानना चाहते हो तो प्रेमचन्द से उत्तम परिचायक नहीं मिल सकता है। इससे अधिक सच्चाई से दिखा सकने वाले परिदर्शक को अभी हिन्दी–उर्दू की दुनिया नहीं जानती।"

1.2.2 'गोदान' का कथानक

होरी राम अवध के गांव बेलारी का एक छोटा किसान है। उसके पास चार–पांच बीघा ज़मीन मात्र का सहारा है। परिवार में धनिया, पुत्र गोबर और दो पुत्रियां–सोना और रूपा है। उसके तीन और सन्तान भी हुई थीं, पर दवा–दारू के अभाव में सब शैशव में ही चल बसी। शोभा और हीरा नामक उसके दो भाई हो। कभी ये संयुक्त परिवार रहा है, पर जब से वह संयुक्त परिवार टूटा है, गुजर बसर बेहद कठिनाई से हो पाती है। होरी व्यवहार कुशल भी है, इसीलिए प्रायः वह ज़मींदार को सलाम करने उसके गांव सेमरी जाता रहता है। एक दिन होरी इसी प्रकार सेमरी जाने को उद्यत होता है। तो धनिया उसे जलपान करके जाने का आग्रह करती है। होरी यह जानता है कि जमींदार से मिलते–जुलते रहने का ही परिणाम है कि उनकी कृपा बनी हुई है, और अपनी जान बची हुई है। अन्यथा यह मालूम ही न हो पाता कि कहां गुम हो जाते। अपनी इस धारणा को वह धनिया पर व्यक्त करते हुए कहता है कि "जब दूसरे के पांव तले अपनी गर्दन दबी हुई हो तो उन पांवों को सहलाने में ही कुशल है।" धनिया उसके आगे लाठी, मिरजई, जूते, पगड़ी आदि लाकर रख देती है। हास–परिहास के बाद होरी कन्धे पर लाठी रखकर जमींदार से मिलने चल पड़ता है।

होरी निर्धन, साधनहीन किसान है। उसके मन में एक गऊ प्राप्त करने की लालसा चिरकाल से संचित थी। रास्ते में अपनी गायों के साथ आते भोला से भेंट होने पर उसकी यह लालसा प्रबल हो उठती है। होरी अपनी वाणी के कौशल से विधुर भोला का दूसरा विवाह करवाने का लालच देता है। वह उसको मुफ्त में भूसा देने का आश्वासन भी देता है। उसके इस अपनत्व और

सौजन्यपूर्ण व्यवहार से भोला बहुत भाव–विभोर होता है। वह उधार पर होरी को एक गाय देने को उद्यत हो जाता है।

रायसाहब अमरपाल सिंह जागीरदार हैं। होरी उनकी ड्योढ़ी पर पहुँच कर देखता है कि दशहरे पर होने वाले धनुष–यज्ञ की ज़ोरों की तैयारियां हो रही हैं। रायसाहब होरी को राजा जनक का माली बनने का प्रलोभन देते हैं। अपने लम्बे चौड़े खर्चों का रोना रोकर वह होरी की सरल संवेदना को उभारते हैं और उसे ताकीद करते हैं कि आसामियों से कम से कम पांच सौ रूपया शगुन के रूप में इकट्ठा होना चाहिए। होरी शगुन के रूपयों की चिन्ता करता हुआ गांव पहुंचता है।

होरी के पुत्र को अपने पिता की मालिकों की रोज़–रोज़ खुशामद करते जाने की यह प्रवृत्ति पसन्द नहीं है। अपने पिता के इस विश्वास को वह नहीं मानता कि बड़े छोटे भगवान् के घर से ही बन कर आते हो अथवा सम्पत्ति बड़ी तपस्या तथा पूर्व जन्म के पुण्यों से मिलती है। तभी भोला भूसा लेने आ जाता है। पहले धनिया और गोबर होरी के इस धर्मात्मापन की आलोचना करते हो, पर यहां पर भूसे का खांचा रखकर भोला के घर पहुंचाने जाते हो, जहां गोबर का भोला की विधवा बेटी झुनिया से परिचय होता है। यही परिचय शीघ्र ही उनके आकर्षण और प्रणय में बदल जाता है।

दूसरे दिन प्रातः गोबर भोला के घर गाय लेने जाता है। उधर दमड़ी बंसोड़ बांस खरीदने आता है। होरी अपने भाई से बांस के कुछ पैसे बचाने की चेष्टा करता है, पर होरी के भाई हीरा की बहु पुन्नी बंसोड़ को बांस काटने से रोकती है और बंसोड़ की पिटाई होती है। पर बाद में जब बंसोड़ होरी को कम पैसा देता है तो उसे अपने लोभी और स्वार्थी होने का बोध होता है। शाम को गोबर गाय लेकर आ जाता है। होरी की जन्मों की साध पूरी हुई थी। वह दौड़ कर गाय के गले से लिपट जाता है। धनिया के कहने से गाय अन्दर आँगन में बांधी जाती है। सारा गांव गाय देखने आता है, पर होरी के भाई शोभा और हीरा नहीं आते। होरी अपनी बेटी रूपा को भेजकर उन्हें बुलवाना चाहता है, पर धनिया उसे बीच में ही रोक देती है। होरी का मन नहीं मानता, इसलिए वह रात को भाई से मिलने हीरा के घर की ओर चल देता है। होरी रास्ते में दोनों भाइयों को परस्पर उसी के विषय में बात करते सुनकर ठिठक जाता है। हीरा कह रहा था कि होरी ने पहले की सब की सांझी कमाई में से छिपाये धन से ही गाय खरीदी है वह यह भी चेतावनी देता है कि यदि भगवान् ने चाहा तो देर तक गाय नहीं रह पायेगी। यह आरोप सुनकर होरी को कष्ट होता हो वह वहां से वापिस लौट जाता है और उसी समय गाय खोलकर भोला को लौटाने को उद्यत हो जाता है। यह जानकर धनिया क्रुद्ध हो उठती है। वह हीरा की आलोचना का प्रत्युत्तर देने उसके द्वार पर जा पहुंचती है। इस अवांछित आलोचना पर वह गाली–गलोच पर उतर आती है। सारा गांव इकट्ठा हो जाता है। हीरा भी धनिया की गालियों से नाराज होकर उसे जूतों से पीटने की धमकी देता है। होरी आकर सब को चुप कराने का प्रयास करता है। होरी सोचता है कि वह धनिया के कारण अनेक बार इसी प्रकार अपमानित हो चुका है। सारा गांव हीरा के विरूद्ध हो जाता है। धनिया एकाएक उसे धकियाती है, जबकि होरी उसे घसीटता हुआ घर ले जाता है।

आषाढ़ की प्रथम वर्षा होते ही किसान खेतों की जुताई की सोचते हो, पर तभी जमींदार का कारकुन पंडित नोखेराम सबको कहला भेजता है कि पुराना बकाया न चुकाने की अवस्था में किसी

को खेतों में हल नहीं ले जाने दिया जाएगा। होरी रूपयों की व्यवस्था से झिंगुरी सिंह साहूकार के पास जाता है और गाय तक बेचने तक तैयार हो जाता है। धनिया भी इस पर तैयार हो जाती है, पर होरी गाय को खोलकर ले जाने का साहस नहीं कर पाता। वह अब सूद पर ही रूपया लेने का निर्णय करता है। भीतर उमस है, अतः वह गाय को बाहर बांध देता है। हीरा अवसर पाकर जंगल से काटी विषैली जड़ी गाय को खिला देता है। होरी उसे गाय के पास खड़ा देख लेता है पर वह बहाना करके सन्देह पैदा नहीं होने देता। तभी गोबर खबर देता है कि गाय तड़प रही है मानो किसी ने उसे विष दे दिया हो। होरी धनिया से हीरा के प्रति अपना सन्देह व्यक्त करता है। गाय मर जाती है। प्रातः ही हीरा के घर हंगामा मच जाता है। होरी धनिया को मुंह बन्द रखने को कहता है और उसे पीटता भी है। वह गोबर की झूठी कसम तक खाकर अपने शक से धनिया को समझाना चाहता है। पर तभी हीरा के घर से भाग जाने के समाचार से सारा रहस्य खुल जाता है। चौकीदार की रिपोर्ट पर शाम को थानेदार गांव में आ धमकता है। वह हीरा के घर की तलाशी लेना चाहता है। होरी को यह अपने कुल की मान हानि प्रतीत होती है। वह रिश्वत देकर थानेदान को भाई के घर की तलाशी लेने से रोकना चाहता है। पंचों से पैसा उधार लेकर जब वह थानेदार की ओर बढ़ता है तभी धनिया अत्यधिक क्रोध से झपट कर होरी का अंगोछा छीन लेती है सारे रूपये बिखर जाते हो। वह पंचों को और थानेदान को इस अन्याय के लिए फटकारती है। थानेदार तलाशी लिए बिना ही और पंचों से ही अपनी भेंट–पूजा वसूल करके लौट जाता है।

इस घटना के बाद कुछ समय तक धनिया और होरी में मनमुटाव रहता है, पर होरी के अस्वस्थ होने पर फिर सुलह–सफाई हो जाती है। होरी हीरा की पत्नी पुनिया की देखभाल करता है उसके खेत जोतता है तथा इससे उसके अपने कार्य की हानि भी होती है। दूसरी ओर गोबर–झुनिया प्रेम की परिणति झुनिया के गर्भवती होने के रूप में होती है। गोबर घर से भाग कर लखनऊ पहुंच जाता है। झुनिया होरी के घर पहुंचती है।

धनिया होरी को खेत से बुलाने जाती है। दोनों झुनिया को घर से बाहर निकाल करने का निर्णय लेकर आते हो, पर घर पहुंचने तक धनिया का मातृ–स्नेह जागता है वह होरी को झुनिया को कुछ न करने का आग्रह करती है। दोनों उसे बेटी की तरह स्वीकार करते और आश्रय देते हो, और झुनिया भी उसके पैरों से लिपट जाती है। गांव में इस घटना से हलचल मच जाती है। पंचायत जुटती है जो होरी पर सौ रुपया नकद और तीस मन अनाज का जुर्माना कर देती है। धनिया पंचों से दया की भीख मांगती है, पर कौन सुनता है। होरी झिंगुरी सिंह को अनाज पहुंचाता है, पर धनिया आकर उसे रोक लेती है। इस अन्न को पैदा करने में वह अपने परिश्रम का हवाला देकर सारा अन्न होरी को नहीं ले जाने देती। परिस्थिति की विडम्बना तो यह है कि जब होरी अस्सी रुपये में अपना मकान गिरवी रखने झिंगुरी के पास जाता है, तो उधर पोते के जन्म पर धनिया पूरी आवाज में गला खोल कर सौहर गाती है।

धनिया के अपने घर आने के समय गोबर छिपा हुआ था वह अनिर्णय की स्थिति में था। पर जब वह होरी को धनिया के द्वारा झुनिया को आश्रय देते देख लेता है तो निश्चिन्त भाव से कुछ करने के लिए शहर की ओर चल देता है। वह धन कमा कर गांव का मुंह बन्द करने का संकल्प लेकर निकलता है। लखनऊ में पहुंच कर वह मिर्जा खुर्शीद के पास पहुंचता है। वह एक कबड्डी का आयोजन कर रहे थे। गोबर भी छः आना रोज पर उनके साथ हो जाता है। कबड्डी में मिर्जा

और प्रोफेसर मेहता भी भाग लेते हो। मेहता की जीत होती है, और मिर्जा गोबर को पन्द्रह रुपये मासिक वेतन पर अपने पास नौकर रख लेता है।

होरी की सारी फसल तो पंचायत के दण्ड में निकल चुकी थी। घर पर चुटकी भर आटा भी नहीं है। होरी जहां भी जाता है निराशा और डांट–फटकार ही प्राप्त होती है। तभी पुन्नी कुछ दाल और आटा लाकर धनिया को देती है। यह सब होरी के परिश्रम का ही परिणाम था, पर धनिया आज जीवन में प्रथम बार पूरी तरह परास्त अनुभव करती है। सावन आता है। वर्षा समय पर नहीं होती। गन्ने की बीजाई नहीं हो पाती। भोला को होरी से रूपये नहीं मिलते तो वह वसूली के लिए होरी के घर पर ही आ धमकता है। वह होरी के दोनों बैल खोल कर ले जाता है। भोला आग्रह करता है कि यदि वे उसकी चरित्राहीन बेटी झुनिया को घर से निकाल दें तो वह दया कर सकता है। पर धनिया भी झुनिया को घर से निकालने को तैयार नहीं होती। गांव वाले भोला को रोकते हो पर होरी सब कुछ धर्म पर छोड़ने की बात कहकर सब कुछ खो बैठता है।

इसी बीच रायसाहब को होरी से जुर्माना वसूली की घटना मालूम होती है। वह नोखेराम को बुलाकर जवाब तलब करते हो और जुर्माना की पूरी रकम तुरन्त जमा करवाने का आदेश देते हो। पंच यह निर्णय सुनकर चिन्तित होते हो। पर पटेश्वरी और नोखेराम 'बिजली' पत्र के सम्पादक ओंकारनाथ को गुमनाम पत्र लिखकर रायसाहब पर यह आरोप लगाते हो कि वह आसामियों से जबरदस्ती जुर्माना वसूल करते हो। उस काल के स्वतन्त्राता संग्राम के वातावरण में यह आरोप रायसाहब को चिन्तित कर देता है पर वह अखबार की सौ प्रतियों का मूल्य ओंकारनाथ को देकर उसका मुंह बन्द कर देते हो।

बैलों के बिना होरी अपंग हो जाता है। वह औरों के खेतों में मजदूरी करके पेट पालता है। तभी दातादीन आधे सांझे में खेती करने का उसके सामने प्रस्ताव रखता है। विवश होरी उसे स्वीकार करता है। दातादीन के दिए अनाज से उस दिन होरी के घर चूल्हा जलता है। खन्ना की शक्कर मिल खुल चुकी है। उसके कारिन्दे गांव में आकर गन्ना खरीदने का बयाना देते हो। होरी भी बयाना ले लेता है। वह महाजनों की निगाह से गन्ना बचाना चाहता है पर ऐसा कर नहीं पाता। मिल के फाटक पर बैठे झिंगुरी सिंह उसके गन्ने के रूपयों में सूद सहित अपने रुपये काट कर केवल पच्चीस रूपये उसके हाथ में थमा देता है। होरी उन रूपयों को भी नोखेराम को थमाकर ग्लानि, लज्जा और हताशा से भरा घर लौटता है। धनिया उसकी मूर्खता, कमज़ोरी और कायरता पर उसे लताड़ती है, परन्तु उसे भी यह बोध तो है ही कि महाजनों के चंगुल से बच पाना कितना कठिन है। होरी भी खाली हाथ घर आने पर दुःखी है। आरती में कुछ न दे सकने पर भी उसे बहुत मलाल है। वह वहां भी जाने से पहले बहुत झिझकता है। पर शीघ्र ही वह मर्यादा की इस गुलामी के बन्धन को तोड़कर आरती का पुण्य लेने खाली हाथ ही वहां पहुंच जाता है।

होरी अब दातादीन की मज़दूरी करता है। वह ऊख के टुकड़े काट रहा है और धनिया और बेटियां ताल से ऊख के भीगे हुए गट्टे निकाल कर खेत पर ला रही हो। तभी दातादीन होरी को तेज़ी से हाथ चलाने के लिए डांट देता है। होरी अब विक्षिप्त के समान गंडासा चलाता है और शीघ्र ही बेहोश होकर गिर जाता है। धनिया विलाप करती है। कुछ देर में होरी सचेत होता है। दातादीन का पुत्रा मातादीन उसे गर्म दूध पिलाता है जिसमें होरी में मानों प्राणों का संचार होता है। तभी नगर से गोबर वापिस लौटता है। वह सब के लिए कुछ सामान लाया है। शहर में नौकरी

छोड़ वह छोटी–मोटी दुकान करता है, जिससे वह अढ़ाई–तीन रुपये रोज कमा लेता है। उसे झुनिया से गांव के सारे समाचार और परिवार की यातना का इतिहास मालूम होता है। बन–संवर कर वह गांव देखने निकलता है। वह दातादीन व झिंगुरी सिंह को बातों–बातों में ख़ूब आड़े हाथों लेता है। वह भोला से भी मिलने जाता है। वहां वह अपने भाग्योदय का वर्णन करता है। भोला के पुत्र जंगी को भी अपने साथ शहर ले जाने का प्रस्ताव करता है। शाम को जब वह लौटता है तो न केवल होरी के दोनों बैल बल्कि दही की दो हांडिया भी भोला के घर से लेकर आता है। वह गांव के युवकों को भी वश में कर लेता है। होली के अवसर पर उसके घर भांग झनती है। झिंगुरी सिंह, दातादीन आदि की ख़ूब नकल उतारी जाती है। अगले दिन प्रातः ही दातादीन से उसकी झड़प होती है, पर वह तब भी दातादीन की महाजनी की आलोचना करता है, और उसके कर्ज़ के रुपये पर एक रूपया सोकड़ा से अधिक का ब्याज देने से साफ मना कर देता है पर धर्म के बोझ तले दबा होरी ब्राह्मण का पैसा रखने को तैयार नहीं, और पहले से तय भारी सूद देने को उद्यत रहता है। गोबर नोखेराम को भी थमकाता है तथा रायसाहब से शिकायत करने की चेतनावनी देता है। इस तरह वह उससे मनवा लेता है कि लगान का पैसा उसे मिल चुका है। वह पिता को भी उसकी अतिमूर्खता के लिए फटकारता है तथा माँ से भी वाद–विवाद करता है। वह अपने माता–पिता को मूर्ख भी मानता है और स्वार्थी भी वह झुनिया और बच्चे को लेकर बिना कहे नगर वापिस चला जाता है।

धनिया इसके लिए झुनिया को और होरी गोबर को जिम्मेदार मानता है। तभी गांव में एक और कांड होता है। पंडित दातादीन का बेटा मातादीन सिलिया नामक चमारिन से फंसा हुआ है। कुछ चमार बिरादरी मातादीन का जनेऊ तोड़कर उसके मुंह में हड्डी डालकर उसे धर्म–भ्रष्ट कर देते हो। मातादीन सिलिया को नौकरानी के समान रखने को तैयार है। धनिया सिलिया को अपने घर लाकर आश्रय देती है। उधर बड़ी बेटी सोना सयानी हो जाती है। उसका विवाह करना अब ज़रूरी हो जाता है। दुलारी सहुआइन की मिन्नत–खुशामद करके होरी उससे विवाह के ख़र्चे का रूपया देने का आश्वासन प्राप्त कर लेता है। सोना और सिलिया सहेलियां हो। सोना सिलिया को अपने होने वाले पति के पास भेजकर उससे दहेज न लेने की प्रार्थना करती है। इसका प्रभाव होता है कि लड़के का पिता भी बिना दहेज विवाह के लिए तैयार हो जाता है। इसी बीच भोला दूसरा विवाह कर लेता है। उसकी युवती पत्नी नोहरी सारे ग्राम का आकर्षण का केन्द्र है। नोहरी सोना के विवाह के लिए दो सौ रूपया देती है। वह अपने इस सत्–कार्य का खूब यशगान करती है, पर दूसरी ओर बूढ़े पति को जूतों से मारकर घर बाहर करती है। होरी भोला के लिए भी चिन्तित है।

सिलिया के पुत्र पैदा होता है, पर वह मर जाता है। मातादीन पर इसका प्रभाव पड़ता है और वह खुले रूप से अब सिलिया की झोंपड़ी में ही उसके साथ आकर रहने लगता है। होरी की दशा बिगड़ती जाती है। नोखेराम उस पर बेदखली का दावा करता है। होरी तीन वर्षो से लगान का बकाया नहीं दे पाया था। एक दिन मातादीन होरी के पास आकर अधेड़ आयु के राम सेवक मेहता से छोटी बेटी रूपा का विवाह करके सारा संकट टालने का मशवरा देता है। धनिया बेटी बेचने को तैयार नहीं, पर जब रामसेवक स्वयं ही होरी के घर आ जाता है तो भला आदमी जानकर धनिया विवाह के लिए तैयार हो जाती है। गोबर को भी बुला लिया जाता है। दातादीन जब होरी को दो सौ रुपये देने आता है तो होरी तीस वर्षों में पहली बार पूरी तरह परास्त अनुभव करता है। रूपा का विवाह हो जाता है, पर होरी को घर से बाहर निकलते किसी ने नहीं देखा।

गोबर अब की बार झुनिया और मंगल को गांव में ही छोड़कर नगर लौटता है। अब यह माता–पिता की अवस्था तथा मजबूरी को अधिक सहानुभूति के साथ देखता है। होरी मंगल के लिए गाय खरीदना चाहता है। इसके लिए वह सड़क बनाने के लिए कंकड खोदने की मजदूरी करने लगता है, जिससे उसे रोज़ आठ आने मजदूरी मिलती है। एक दिन फकीर के रूप में उसका घर से भागा हुआ और अपनी गाय का हत्यारा भाई हीरा लौट आया है और होरी के पांव पर आ गिरता है होरी की छाती फूल उठती है। अपनी सत्यवादिता, त्याग और भ्रातृ–प्रेम पर उसे गर्व की अनुभूति होती है। पर अब तक होरी का अन्तकाल निकट आ गया था। उसे कंकड़ लादते समय लू लग जाती है। वह मरणासन्न है, पर मरते समय तक गाय खरीदने की लालसा उसके मन में बनी रहती है। हीरा धनिया से कहता है कि अब होरी के 'गोदान' करवाने का समय है। रोती हुई धनिया सूतली कात कर कमाए बीस आने पति के ठंडे हाथ में रखकर दातादीन से कहती है कि 'महाराज घर में न गाय है, न बछिया, और न पैसा। यही पैसे हो, यही इनका 'गोदान' है।' यह कह कर पछाड़ खाकर गिर जाती है।

ग्राम की इस कथा के सामान्तर एक नगर कथा भी है। राय साहब अमरपाल सिंह और गोबर आदि ग्राम की मुख्य तथा नगर की इस अवांतर कथा के सम्पर्क सूत्र बनते हो। जमींदार रायसाहब होली के अवसर पर अपनी प्रजा के साथ–साथ नगर के अपने मित्रों को भी आमन्त्रित करते हो। होरी इसमें न केवल आमन्त्रित है, बल्कि वह छोटा–मोटा प्रबन्धकर्त्ता भी है तथा इस अवसर पर होने वाले धनुष यज्ञ में जनक के माली की भूमिका भी निभाता है। नगर के पात्रों की परस्पर बातचीत में जमींदारी व्यवस्था, किसानों का शोषण और कल्याण आदि विषय प्रमुख है। होरी पठान वेशधारी मेहता को पीटकर ग्रामीण जन की बहादुरी व वीरता का उदाहरण भी प्रस्तुत करता है। इसी अवसर पर जमींदार द्वारा लिखे गए प्रहसन का अभिनय होता है, जिसमें एक मुकद्दमेबाजी देहाती जमींदार का चित्र प्रस्तुत हुआ है। शहरी पात्र शिकार पर जाते हो। इस अवसर पर भी नगर तथा ग्राम जीवन की तुलना का अवसर लेखक बना लेता है। रायसाहब और सम्पादक ओंकारनाथ के प्रसंग में भी ग्राम की कथा और व्यवस्था पर और अधिक प्रकाश पड़ता है। मेहता मालती के साथ गोबर का सम्पर्क तथा होरी के घर में आना भी होरी का मुख्य कथा के साथ नगर–कथा को जोड़ता है। खन्ना–गोबिन्दी कथा किसानों के जमींदारी–महाजनों के अतिरिक्त अब पूंजीपति के भी दोहरे–तिहरे शोषण को उद्घाटित करती है। रायसाहब की कथा से यह स्पष्ट है कि वह किसानों के लगान में वृद्धि–बेदखली और नजराना लेकर विलासमय जीवन व्यतीत करते हो। परन्तु इसी का परिणाम है कि सारे परिवार का आत्म–सम्मान व महत्वकांक्षांए समाप्त हो जाती हैं और पुत्र–पुत्री तथा सारा परिवार छिन्न–भिन्न हो जाता है। मिर्जा खुर्शीद भी अन्त में उस ग्रामीण बाला को याद कर लेता है, जिसने नगरीय प्रशिक्षित नर्स की अपेक्षा अधिक प्रेम–समर्पण और निःस्वार्थ भाव से उसकी सेवा की थी। इस प्रकार यह नगर–कथा होरी की मुख्य कथा का ही अंग बन कर उसे शक्ति भी देती है तथा और अधिक उजागर भी करती है।

1.2.3 'गोदान' : कथानक–विवेचन

'गोदान' की कथा सर्वथा मौलिक है। मौलिक होने के साथ–साथ यह हर दृष्टि से सम्भावित तथा विश्वसनीय भी है और इसमें वह सहज आकर्षण पर्याप्त मात्रा में विद्यमान है जो पाठक को तल्लीन करने के लिए वांछित होता है। काल्पनिक और यथार्थ जीवन में, उपन्यास को पढ़ते हुए

पाठक को कोई अन्तर ही नहीं होता। रोचकता के गुण का 'गोदान' में समुचित विकास हुआ है। कथा का विकास सहज तथा स्वाभाविक रूप में ही होता है। कथा का स्वाभाविक विकास करने के लिए प्रेमचन्द विभिन्न परिस्थितियों में अपने पात्रों को अपनी–अपनी चारित्रिक–विशेषताओं से सम्पन्न रूप से चित्रित करते हो और उसी के अनुरूप उनका व्यवहार दिखाते हो। यदि व्यवहार में सहज विकास, परिवर्तन अथवा विषय प्राप्त होता है तो प्रेमचन्द उसका कारण स्पष्ट करना नहीं भूलते। कार्य–कारण भाव को श्रृंखला का समुचित और प्रभावपूर्ण निर्वाह 'गोदान' के कथानक की बहुत बड़ी विशेषता है।

दोहरे कथानक की शैली जहां संयोजन की दृष्टि से काफी कठिन होती है वहां प्रभाव की दृष्टि से यह बहुत उपयोगी और महत्वपूर्ण भी है। 'गोदान' में नगर और ग्राम जीवन की कथाएं समानान्तर चलती है। उसके सम्पर्क–सूत्रा बहुत हल्के सामान्य तथा कमज़ोर से लगते हो। पर अप्रत्यक्ष रूप से उपन्यास के मुख्य कथ्य को समझने में इस आयोजन की भूमिका महत्वपूर्ण है। किसान के अति की सीमा तक पहुंचे शोषण को, टूटती हुई सामन्ती व्यवस्था को, उभरती हुई पूंजीवादी व्यवस्था को और सबसे अधिक पुराने और नए मूल्यों के संक्रमण की गतिशीलता को अकेला नगर का कथानक कभी पूरी गहराई के साथ तथा गहरी चुभन के साथ व्यक्त नहीं कर सकता था।

ग्रामीण पात्रों से सम्बन्धित कथा–भाग में उल्लिखित परस्पर सम्बन्ध बहुत सहज, स्वाभाविक और सरल हैं और अपने–अपने वर्ग और व्यवसाय के अनुरूप वे सब अपना अपना जीवन–यापन करते चलते हो पर नागरिक पात्रों का जीवन कुछ अधिक स्वतन्त्रा रूप में और अधिक परिवर्तनशील रूप में चित्रित हुआ है। रायसाहब जमींदार हो, धनी हो उन्हें अपने जैसे उच्च वर्गीय लोगों से मेल–मिलाप की आवश्यकता है। उन्हें समाज के कुछ वर्गों के प्रतिनिधियों को अपने साथ रखना पड़ता है, उन्हें बोकर की आवश्यकता है। सम्पादक भी उनके निकट होना चाहिए। इसी प्रकार तंखा जैसे दलाल, मिर्जा जैसे विनोद प्रिय व्यक्ति भी इनकी सभा में मौजूद हो। वह एसेम्बली के सदस्य भी बनते हो। इसके लिए भी उन्हें समाज के सभी प्रभावशाली वर्गों से सम्पर्क रखना पड़ता है। समाज में डाक्टर व अध्यापक का अपना निजी स्थान है। इस तरह रायसाहब की मित्र मंडली में लेडी डाक्टर मालती और प्राध्यापक मेहता को स्थान प्राप्त है। इन सभी पात्रों की वृति तथा प्रवृति स्वतन्त्र है। इनकी कथाएं भी भिन्न–भिन्न हो, पर रायसाहब का धनुष यज्ञ इन्हें नज़दीक ले आता है। इस प्रकार नगर पात्रों के कथांश में भी कौशल के साथ कार्य–कारण सम्बद्ध भाव बनाने में प्रेमचन्द सफल होते हो।

रायसाहब, मालती, मेहता, खन्ना तथा ओंकारनाथ आदि ग्राम तथा नगर कथाओं में सम्बद्ध सूत्र का काम करते हो। मालती मेहता होरी के गांव में जाते हो। गोबर और उसके परिवार के सदस्य सेवा में रत रहते हो। रूपा के विवाह के अवसर पर मालती उसे उपहार भिजवाती है और स्वयं भी विवाह में शामिल होती है। नोखेराम का कारिंदा ओंकारनाथ सम्पादक को पत्र लिखता है और रायसाहब से अपना बचाव करता है। खन्ना की मिल में गोबर नौकरी करता रहता है। इसी मिल में होरी के गांव की ईख जाती है। नगर के पात्र गांव के जीवन, वहां की सामाजिक तथा आखथक दशा पर चर्चा करके सुधार की इच्छा भी व्यक्त करते हो। इस प्रकार ग्राम तथा नगर की ग्रामीण एवं नगर पात्रों की घटनाएं कहीं न कहीं परस्पर जुड़ जाती हो। घटनाओं के घात प्रतिघात

में चरित्रों का विकास होता है और चरित्र घटनाओं को संचालित करते हैं। यह श्रृंखलाबद्धता और तर्कसंगत गतिशीलता 'गोदान' के कथानक की प्रमुख विशेषताएं हैं।

संघर्ष का तत्व भी कथानक की रोचकता, आकर्षण और प्रभाव–क्षमता की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। 'गोदान' में आन्तरिक संघर्ष की अपेक्षा बाह्य अथवा परिस्थितिजन्य संघर्ष का प्राधान्य है। सामाजिक व्यवस्था, परम्परा, रूढ़ि धार्मिक व्यवस्था और आर्थिक विवशता–जन्य यह संघर्ष व्यक्ति की छटपटाहट, मजबूरी, कमज़ोरी को उद्‌घाटित करता है और कथानक के साथ पाठक की मनोभावनाओं को जोड़ता चलता है। अन्तवृतियों की प्रबलता के साथ उद्वेलित करने वाले आन्तरिक संघर्ष का अवश्य 'गोदान' में कुछ अभाव है। होरी का सारा जीवन ही संघर्षों की एक लम्बी कहानी है। यह संघर्ष सामाजिक व्यवस्था के साथ है। धार्मिक रूढ़ियों, आर्थिक व्यवस्था तथा उसकी अपनी ही दुविधाएं उसे सदा पीड़ित बनाती रहती हैं। धनिया भी संघर्ष में रहती है। उसकी प्रवृतियां अधिक बहुर्मुखी, स्पष्ट और प्रतिहिंसा पूर्ण है।

हीरा के द्वारा गाय को विष देने के प्रसंग से, गोबर–झुनिया प्रसंग से और सिलिया–मातादीन प्रसंग से होरी और धनिया के तथा गोबर और मातादीन के इस संघर्ष का मनोहर परिचय प्राप्त होता है। धनिया प्रतिहिंसा की आग में जल रही है, पर हीरा का घर से भाग जाना मानो उसकी प्रतिहिंसा की अग्नि को शान्त कर देता है। घर में आई झुनिया को वह घर से निकाल बाहर करने का संकल्प लेकर खेत से होरी को बुलाने जाती है। उसे उकसाती भी है और चेतावनी भी देती है कि यदि होरी बीच में बोला तो अच्छा नहीं होगा। पर जब होरी भी सहमति से उग्र रूप धारण कर लेता है तो वह उसे शान्त करने तथा झुनिया के प्रति ममता जागृत करने का प्रयास करती है। इसी प्रकार गोबर छिप–छिपकर माता–पिता की झुनिया सम्बंधी प्रतिक्रिया को हृदय थाम कर देख–सुन रहा है। झुनिया के प्रति माता–पिता के दुर्व्यवहार की आशंका से वह महाभारत मचाने तक का मन बना लेता है। पर माता के स्नेहपूर्ण व्यवहार से उसकी भाव–मुद्रा परिवर्तित होती है। अब वह कुछ कमाकर तथा परिवार के लिए उपयोगी रूप में लौटने का व्रत लेकर नगर की ओर निकल जाता है। इस तरह से परिस्थितिजन्य संघर्षों की 'गोदान' में भरमार है और इस कथानक में गहनता, सुगठितता तथा प्रभविष्णुता के तत्वों की वृद्धि ही हुई है। खन्ना, मालती, झुनिया, सिलिया आदि के जीवन से भी संघर्ष के अनेक अवसर होते हो जो कथानक के विकास तथा चरित्र के विश्लेषण के साथ–साथ 'गोदान' प्रभाव क्षमता में वृद्धि का कारण बनते हो।

इस उपन्यास का वर्ण्य–विषय समाज है। इसके कथानक द्वारा प्रेमचन्द समाज के विभिन्न वर्गों की अपनी निजी तथा उनकी पारस्परिक स्थितियों पर प्रकाश डालने का सफल उपक्रम करते हो। 'गोदान' की कथा स्पष्टतः तीन भागों में विभक्त हो सकती है। समाज के तीन वर्गों का चित्रण इस उपन्यास का मुख्य विषय है। यह तीन वर्ग हो शोषित, शोषक और सुधारक वर्ग। 'गोदान' का मुख्य ढांचा शोषित वर्ग तथा उसकी दयनीय स्थिति पर आधारित है। शोषण के बिना शोषित और शोषक वर्ग की कोई संगति नहीं है। अतः रायसाहब हो या खन्ना, मातादीन हो या झिंगुरी सिंह, नोखेराम हो या पटेश्वरी इनकी उपस्थिति में ही होरी तथा उसके वर्ग के सब नर–नारी पात्रों की दुर्दशा का सही चित्र बन पाता है। इसी प्रकार शोषक तथा शोषित वर्गों के साथ सुधारक अथवा उस दिशा में सोचने वाले वर्ग की भी स्वाभाविक संगति बनती है। इस प्रकार नगर–कथा तथा नगर पात्रों को 'गोदान' के मुख्य कथानक का अनिवार्य तथा स्वाभाविक अंग कहा जाना चाहिए,

अवांछित अथवा आरोपित अंश नहीं। नगर–पात्रों की कथा द्वारा ग्रामीणों तथा कृषकों के जीवन की विषमताओं का वर्णन किया गया है। जमींदार कृषकों के शोषण का माध्यम हैं और सुधारक उसी का जमा–खर्च करते हैं। उनके लिए सुधार संघ बना कर उनसे झूठी संवेदना व्यक्त करते हैं और प्रस्ताव पारित करते हैं।

1.2.4 सारांश

उपन्यास का अन्त बहुत ही मार्मिक है। प्रेमचन्द का जीवन अनुभव, उनकी संवेदना का सारा भंडार एवं उनकी कला का उज्जवलतक रूप 'गोदान' में प्राप्त होता है। इस रचना में उन्होंने समाज का सजीव चित्र प्रस्तुत किया है और यह भी स्पष्ट करने का प्रयास किया है कि थोड़ा–बहुत नियम–कानून बदलने से या छोटे–छोटे सुधारवादी प्रयासों से सुधार संभव नहीं होगा। होरी इसी समाज की उपज है। उसका सारा उत्पीड़न और शोषण इसी अवस्था से उत्पन्न हुआ है। अपने मानवीय सद्गुणों के कारण वह महान है परन्तु सामन्तों पूंजीपतियों एवं धर्म के ठेकेदारों के कारण वह जीवन भर पराजय झेलता रहा। होरी का दुखद अन्त भारतीय समाज के लिए एक चुनौती है। यह भारत के प्रत्येक पीड़ित, निर्धन और दलित व्यक्ति के लिए एक चुनौती है। प्रेमचन्द 'गोदान' के द्वारा समकालीन भारतीय जीवन की विडम्बनाओं को पूरी शक्ति तथा पूरे सामर्थ्य के साथ उनके यथातथ्य रूप में उद्घाटित करने में समर्थ होते हैं।

पाठ संख्या–1.3

पात्र और चरित्र–चित्रण

रूपरेखा

1.3.0 उद्देश्य

1.3.1 प्रस्तावना

1.3.2 'गोदान' : चरित्र–चित्रण

1.3.3 सारांश

1.3.0 उद्देश्य :

प्रस्तुत पाठ के अन्तर्गत हम चरित्र–चित्रण की दृष्टि से 'गोदान' का मूल्यांकन करेंगे। इस मूल्यांकन के अन्तर्गत प्रमुख पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं का उद्‌घाटन किया जाएगा और होरी की चर्चा विशेष रूप में की जाएगी।

1.3.1 प्रस्तावना :

किसी भी कथात्मक विधा का आधार उसके पात्र होते हैं। पात्रों को चरित्र भी कहा जाता है। ये वे व्यक्ति होते हैं जिनके द्वारा कथा की घटनाएं घटित होती हैं। वे घटनाओं को प्रभावित करते हैं और घटनाओं से प्रभाव भी ग्रहण करते हैं। इन्हीं के क्रिया–कलाप से कथानक और कथा–वस्तु का निर्माण होता हैं इसलिए कोई रचना भले ही घटना प्रधान हो उसमें पात्रों का या चरित्रों का अभाव सम्भव नहीं है। वस्तुतः कथा की कल्पना में पात्रों की विद्यमानता और पात्रों की विद्यमानता में ही कथा की संघटना सम्भव है।

कथा के पात्रों की प्रस्तुति किस रूप में हो यह निम्नलिखित बातों पर निर्भर है :– (1) कलाकृति का रूप क्या है? (2) लेखक की रूचि और योग्यता का क्या स्तर है? तथा उसकी रचना का उद्देश्य क्या था? इस प्रस्तुति को ही चरित्र–चित्रण कहा जाता है। काव्य–नाटक, कहानी, उपन्यास आदि विविध कथात्मक विधाओं में पात्रों का चरित्रांकन–प्रस्तुति अथवा चरित्र–चित्रण किया जाता है – (1) पात्रों की क्रियाओं अथवा उनके कार्यों द्वारा (2) उनके संवाद, वार्तालाप अथवा कथोपकथन द्वारा तथा (3) स्वयं लेखक के वर्णन और कथन द्वारा। प्रथम दो को नाटकीय तथा अप्रत्यक्ष चरित्र–चित्रण कहा जाता है। नाटक में प्रायः इस पद्धति का अनुसरण किया जाता है। इसे श्रेष्ठ विश्वसनीय तथा अधिक प्रभावपूर्ण पद्धति स्वीकार किया जाता है। इसकी विशेषता यह है कि दर्शक, पाठक और पात्रों के बीच सीधा सम्बन्ध स्थापित होता है और पात्रों के क्रिया कलाप एवं

संवाद के द्वारा पाठक (दर्शक) पात्रों के साथ सीधा सम्बन्ध स्थापित करने और उसके सम्बन्ध में धारणा बनाने में पूरी तरह स्वतन्त्र रहते हैं। नाटकीय चरित्र–चित्रण जितना ही व्यंजक और संक्षिप्त होगा उतना ही अधिक प्रभावशाली होगा। परन्तु इस शैली की एक बहुत बड़ी कमी यह है कि चरित्र की आन्तरिक सूक्ष्मताओं और अवचेतन मनोवैज्ञानिक रहस्यों को उनके संवादों अथवा क्रियाकलापों द्वारा पूरी तरह ठीक–ठाक और स्पष्टता के साथ असंदिग्ध रूप में उपस्थित करना प्रायः सम्भव नहीं होता। विश्लेषणात्मक अथवा अप्रत्यक्ष शैली में लेखक स्वयं गम्भीर और सूक्ष्म रूपों में पात्रों के अन्तर्बाह्य का उद्‌घाटन कर सकता हैं उपन्यास में नाटकीय तथा विश्लेषणात्मक दोनों शैलियों में चरित्र–चित्रण की सुविधा उपलब्ध होने के कारण उपन्यास का चरित्र–विन्यास अधिक विशद विश्वसनीय और पूर्ण रूप से सम्भव होता है। उपन्यास चरित्रों को नाटकीय रूप में प्रस्तुत करने की सुविधा के साथ–साथ उनके व्यवहार, चिन्तर विचार, क्रिया–कलाप इत्यादि, यहां तक कि उनके छदम् कार्य, शब्द व व्यवहार के सम्बन्ध में भी अपना निजी विवेचन, विश्लेषण और टिप्पणी करने के लिए स्वतन्त्र होता है। सुविधानुसार उपन्यासकार नाटकीयता और विश्लेषण का समुचित समन्वय करके मानवीय मनोवेग, भावावेश, विचार, उद्देश्य, प्रयोजन आदि का सूक्ष्मता से आकलन कर सकता है।

गतिशील चरित्रों की सृष्टि ही उपन्यास तथा कहानी की सफलता और महत्ता की कसौटी है। एक ही पात्र के स्वभाव तथा उसके आधार पर होने वाले कार्यों में मनोविज्ञान के अनुरूप परिवर्तन और कभी–कभी आश्चर्यजनक विरोध का चित्रण करके कथा–साहित्य में जिस सौंदर्य की सृष्टि की जा सकती है। वह साहित्य के अन्य रूपों में कहां सम्भव है। चरित्र–चित्रण ही उपन्यास का मूलाधार होता है। पात्रों के स्वभाव और उनकी प्रकृति से ही कथा की घटनाएं अस्तित्व में आती हैं। चरित्रों को स्वाभाविक, वास्तविक और विश्वसनीय बनाने के उद्देश्य से ही उपन्यास के देश काल तथा वातावरण का सृजन होता है। कथोपकथन अथवा संवाद भी चरित्रों को ही व्यंजित प्रकाशित और विकसित करते हैं। इसी प्रकार उपन्यास का उद्देश्य तथा उसकी महत्ता गरिमा आदि ही में निहित होती है। साहित्य में मानवीय मन तथा मनोविज्ञान के महत्व, उपयोगिता और सार्थकता का आधार भी चरित्र–चित्रण ही है।

1.3.2 'गोदान' : चरित्र–चित्रण :

'गोदान' घटना–चरित्र सापेक्ष रचना है इसके पात्र सजीव और विकासशील होते हैं। ये घटनाओं को जन्म भी देते हैं ओर उनसे प्रभावित होकर अपने जीवन में भी परिवर्तन लाते हैं। 'गोदान' में प्रायः सभी प्रमुख पात्रों के चरित्र में घटना चरित्र की सापेक्षता का निर्वाह हुआ है। 'गोदान' के इन तीन पात्रों गोबर, मातादीन और मालती के चरित्रों में विशेष रूप में विकास हुआ है। प्रारम्भ से अन्त तक इनके स्वभाव में चारित्रिक परिवर्तन परिलक्षित होते हैं। मेहता और झुनिया के चरित्रों में भी परिस्थिति के अनुरूप परिवर्तन हुआ है। खन्ना पर भी परिस्थितियों का प्रभाव लक्षित होता है। होरी, धनिया, सिलिया, रायसाहब आदि पात्र अपनी चारित्रिक विशेषताओं में भारी परिवर्तन नहीं दिखाते फिर भी परिस्थितियां उन्हें हिलाती हैं। वे उनसे विचलित भी होते हैं। यदि उनमें परिवर्तन नहीं होता तो इसका कारण उनके चरित्र अथवा स्वभाव की विशेषता है। प्रत्यक्ष जीवन में भी हमें व्यक्ति मिलते हैं। जो कड़ी से कड़ी और भीषण परिस्थितियों में भी अडिग रहते हैं। इनके चरित्र की यह दृढ़ता इनकी विशेषता है कमजोरी नहीं है और इसी कारण इन्हें निर्जीव पात्र नहीं कहा जा सकता। ये परिस्थिति के प्रति प्रतिक्रिया करके भी अपने मूल या केन्द्र पर लौट आते हैं जो उनकी सजीवता की निशानी है। प्रतिक्रिया न करना जड़ता या निर्जीवता का चिन्ह हो सकता है।

प्रेमचन्द अपने पात्रों में प्रकृतिजन्य परिवर्तन अथवा विकास लाने के लिए गहरा प्रभाव डालने वाली परिस्थितियों का निर्माण करते हैं। गोबर को वह गांव से बाहर की परिस्थितियों में ले जाते हैं। फिर झुनिया को भी उसके साथ नगर में पहुंचाते हैं। परिस्थितियां तेज़ी से बदलती हैं और उनका अच्छा–बुरा अनुकूल और प्रतिकूल प्रभाव गोबर के चरित्र पर पड़ता है। उसका बच्चा मर जाता है। झुनिया की विरक्ति बढ़ती है। गोबर इससे खीझता है। वह क्रूर हो जाता है। पर परिस्थिति बदलती है। वह घायल और परवश रूप में घर पर झुनिया के पास पहुंचता है। झुनिया की सेवा उसमें पश्चाताप की अग्नि प्रज्वलित करती है जिस अग्नि के रूप में तप कर वह निर्मल हो जाता है। मालती के चारित्रिक विकास में भी मेहता की संसर्ग–जन्य परिस्थितियों का प्रेमचन्द भरपूर लाभ उठाते हैं।

'गोदान' की पात्र–सृष्टि वर्गगत परिस्थितियों के आधार पर हुई है। पात्र अपने–अपने वर्ग के प्रतिनिधि के रूप में चित्रित हुए हैं। फिर भी वे अपना–अपना निजी व्यक्तित्व भी साथ लेकर चलते हैं। वहीं प्रेमचन्द की कला की महान् सफलता का प्रमाण है। होरी कृषक वर्ग का प्रतिनिधि है पर हर अन्य कृषक से वह एकदम भिन्न भी है। वह अपने भाइयों तथा ग्राम के अन्य कृषकों से अपनी प्रकृति, स्वभाव, आदर्श–किसी बात में मेल नहीं खाता। दातादीन, झिंगुरी सिंह, मंगरू शाह और दुलारी सहुआइन 'गोदान' के महाजन हैं। सब एक ही वर्ग से सम्बद्ध हैं। सब अपने आसामी गांव के कृषक–श्रमिक की विवशता का अनुचित लाभ उठाते हैं और निजी चारित्रिक विशेषता से सम्पन्न हैं।

राय साहब जमीदांर वर्ग के प्रतिनिधि हैं। अपने वर्ग की सब विशेषताएं और बुराइयां इनमें हैं पर वह अपने वर्ग के अन्य जागीरदारों की तरह विलासी नहीं है। वह कर्मशील हैं। यश प्राप्ति की इच्छा उन्हें सत्याग्रह तथा जेल तक ले जाती है। लोकहित के कार्यों में भी भाग लेते हैं। कृषकों के प्रति सहानुभूति रखते हैं। उस व्यवस्था की आलोचना करते हैं। जिसके कारण कृषकों का शोषण होता है। मेहता, मालती, तंखा, ओंकारनाथ आज के शिक्षित नगरीय तथा आधुनिक समाज के विभिन्न पेशेवर वर्गों का प्रतिनिधित्व करते हैं। परन्तु ये सब भी अपने–अपने वर्ग के अपूर्ण प्रतिनिधि हैं। सब अध्यापक, सब लेडी डाक्टर, सब वकील और सब सम्पादक एक से नहीं होते। इसी के अनुरूप ये पात्र भी, अपने वर्ग से भी सम्बद्ध हैं और अपना निजी परिवर्तनशील विकासशील और स्वतन्त्र अस्तित्व भी बनाए हुए हैं। वर्गीय प्रतिनिधित्व की यह अपूर्णता ही इनके व्यक्तित्वों की प्रभाव पूर्ण प्रतिष्ठा का आधार है तथा उपन्यास की सफलता और प्रभावपूर्णता की दृष्टि से इस तत्व का बहुत महत्व है।

उपन्यास यथार्थ जीवन का कल्पित चित्र होता है। अतः यथार्थ जीवन से ही इसके पात्र चुने जाते हैं। 'गोदान' का संसार समाज के विविध वर्गों स्तरों तथा रूपों के पात्रों से निर्मित हुआ है। इस में नर–नारी भारी संख्या में हैं, वे दरिद्र किसान हैं, मजदूर हैं, महाजन, जमींदार, पूंजीपति और छोटे–मोटे पेशों के लोग हैं। उनमें डाक्टर–वकील, अध्यापक, शासक सब हैं। सरकारी कर्मचारियों के विविध वर्ग इसमें उपस्थित हैं। इनमें अच्छाईयां भी हैं और बुराईयां भी। एक ही व्यक्ति में अच्छाई–बुराई का समन्वय भी प्राप्त है। वह स्वार्थ, लोभ अथवा ईर्ष्या के कारण घटिया से घटिया कार्य करने में नहीं झिझकता। पर दूसरे ही अवसर पर किसी सद् प्रेरणा के कारण उसके मानवीय गुण उभरते हैं और बड़े से बड़े त्याग के लिए भी उद्यत हो जाता है। 'गोदान' में इस प्रकार के पात्र और उनकी परिस्थितियों के संघात के चित्र भरे पड़े हैं। होरी, खन्ना, रायसाहब, धनिया, झुनिया सब इसके अच्छे उदाहरण हैं।

चरित्र–चित्रण में पात्र के बाहरी रूप, शारीरिक गठन, वस्त्र–परिधान, चाल–ढाल बातचीत करने की पद्धति आदि का भी विशेष महत्व है। इससे हर पात्र अपनी निजता से सम्पन्न रूप में उभरता है और पाठक का जाना–पहचाना सजीव व्यक्तित्व बन जाता है। इससे उसकी मानसिक विशेषताओं और चरित्रगत निजता का भी कुछ परिचय प्राप्त होता है। पात्र के वस्त्र–परिधान तथा चाल–ढाल उसकी सामाजिक तथा बौद्धिक स्थिति का परिचय देते हैं। प्रेमचन्द बहुत कौशल के साथ पाठकों को पात्रों का परिचय देते हैं। वह इसके लिए दोनों पद्धतियों का सहारा लेते हैं। कभी वह प्रथम साक्षात्कार में ही पात्र का डील–डौल, कद–काठ, रूप–रचना, नाक–नक्श तथा वेश–परिधान का सूक्ष्म तथा विस्तृत विवरण देकर उसको पाठक के जाने पहचाने वृत में शामिल कर लेते हैं। कभी–कभी वह पात्र को पाठक के सामने लाकर उसका सामान्य परिचय करवाकर ही छोड़ देते हैं। फिर यथा–समय यथा–अवसर उसका शेष बाह्य परिचय देते जाते हैं और उसका अधिकाधिक उद्‌घाटन होता जाता है।

चरित्र–विश्लेषण के लिए प्रेमचन्द दोनों प्रचलित पद्धतियों का सहारा लेते हैं। वह स्वयं भी अपने चरित्रों के अन्तर्बाह्य का विश्लेषणात्मक परिचय देते हैं तथा पात्रों के क्रिया–कलाप व्यवहार तथा संवाद से भी यह लक्ष्य सिद्ध करते हैं। प्रस्तुत पात्रों के वार्तालाप द्वारा अप्रस्तुत अथवा अनुपस्थित पात्रों का चरित्र–चित्रण भी वह बहुत सफलता के साथ करते हैं। 'गोदान' की पात्र–सृष्टि में अनावश्यक तथा निरर्थक आयोजन का प्रायः अभाव मिलता है। प्रत्येक पात्र की परिकल्पना कथा के निश्चित विकास और लक्ष्य के अनुसार की गई है। पात्र–सृष्टि के बाद लेखक ने उन्हें अपनी निजी प्रकृति, वर्गगत स्वभाव तथा घटना–प्रवाह के दबाव के अनुकूल कार्य करने का अवसर प्रदान किया है। वह तत्व रचना को प्रभावपूर्ण बनाने में विशेष रूप से सहायक होता है। अपने अन्य उपन्यासों की भांति वह पात्रों की बड़ी संख्या को बहुत सार्थक विधि से कथा में महत्वपूर्ण मोड़ लाने के लिए प्रयुक्त करते हैं। इस प्रकार 'गोदान' में चरित्रों के उद्‌घाटन और उनके विश्वास को सभी उपयोगी पद्धतियों द्वारा प्रयोग करके प्रेमचन्द इस रचना को प्रभावपूर्ण एवं सफल बनाने में समर्थ हुए हैं।

कुछ प्रमुख पात्रों का चारित्रिक परिचय इस प्रकार है :–

1. **होरी** :– 'गोदान' का कथा–नायक होरी ग्रामीण कथा का केन्द्र है। तीन–चार बीघे जमीन के स्वामी इस छोटे किसान का घर रायसाहब अमरपाल सिंह की ताल्लुकेदारी के बेलारी गांव में है। पत्नी धनिया, पुत्र गोबर तथा रूपा और सोना नामक दो पुत्रियों के साथ वह रहता है। शोभा व हीरा नामक उसके भाई अलग रहते हैं। वह छोटा किसान है। निर्धनता में जीवनयापन करता है। सरल स्वभाव का है, छल–कपट से दूर रहना चाहता है। समाज और जमींदार का भय इसके सारे जीवन और व्यवहार को संचालित करते हैं। वह यह जानता और मानता है कि जमींदार की कृपा के कारण ही वह बेदखली और कुड़की आदि से बचा है। इसलिए वह समय–समय पर जमींदार के पास जाकर उसकी खुशामद करता रहता है। वह स्वयं यह मानता है कि जब उसके पांव तले अपनी गर्दन दबी है तो उनके तलवों को सहलाने में ही अपनी कुशल है। वह दूसरों की सहायता अथवा प्रसन्नता के लिए अपनी हानि तक की सीमाओं तक पहुंच जाता है। कभी–कभी उसकी व्यवहार–बुद्धि सजग हो भी तो वह क्षणिक प्रतिक्रिया ही होती है। दूसरे की सुविधा, प्रसन्नता तथा पाप–पुण्य का बोध जागृत होते ही वह फिर अपनी आदर्शवादी मुद्रा में लौट आता है और प्रायः प्रतिकूल कार्य कर बैठता है। कई बार तो वह दूसरों के लिए सांस लेता प्रतीत होता है। उसका अपनापन अस्तित्वहीन प्रतीत होने लगता है। यही कारण है कि उसे कृषण वर्ग की सामान्य प्रकृति का प्रतीक–पात्र भी कहा गया है।

होरी में सामान्य कृषक के बराबर स्वार्थ–बुद्धि भी दिखाई गई है। यह भाव–ताव में चौकस रहता है। रिश्वत का पैसा मुश्किल से गांठ से निकालता है। ब्याज की एक–एक पाई छुड़वाने के लिए वह महाजन की घण्टों चिरौरी करता है। महाजनों के तगादे या गालियों की परवाह नहीं करता। पर इस सब के बावजूद वह सरल है, भोला–भाला है सीधा है। सामाजिकता का दबाव उसे सदा नियन्त्रित ही नहीं, जड़ बनाए रखता है। स्वार्थ–सिद्धि के लिए वह दूसरे के संकट से लाभ उठाना नहीं चाहता। किसी के जलते घर में आग सेंकना उसकी प्रकृति के ही प्रतिकूल है। बल्कि बहुत बार तो उसके व्यवहार से यह भी लगता है कि किसी की थोड़ी–बहुत ठण्डक दूर करने के लिए वह शायद अपने घर को ही फूंकने को उद्यत हो सकता है।

पैतृक परम्परागत भू–सम्पति के प्रति मोह ने उसे भी जड़ बना दिया है। अपनी दुदर्शा के लिए वह, भाग्य कर्मफल और पूर्वजन्म को उत्तरदायी मानता है। मर्यादा का उसका आदर्श अति की सीमा को छूता है। उसका भाई उसकी गाय को जहर देकर कर मार देता है। वह होरी की जन्म–जन्म की साध की हत्या थी। पर उसी भाई के घर की तलाशी लेने आई पुलिस को विरत करने के लिए वह पंचों से रिश्वत का पैसा भारी सूद पर कर्ज लने को उद्यत हो जाता है। उसी भाई की खेती की देखभाल में वह अपनी खेती और अपने परिवार की घोर अपेक्षा का भागी बनता है। कभी–कभी स्वार्थ की हिलोरे उसके जीवन में उठती भी हैं, तो परहित चिन्तन उसे आत्महित की ओर से विरत कर देता है। वह कोमल हृदय है। दूसरों की क्षति को वह अपनी क्षति समझता है। यही उसकी शक्ति है, यही उसके प्रति गहरी संवेदना का आधार है, पर यही तत्व अधिकांशतः उसके दुर्भाग्य का भी मूल कारण है।

समाज और मर्यादा के अंकुश का ही परिणाम है कि होरी दुष्ट और नीच पंचों को भी ईश्वर का अवतार मानता है और उसके द्वारा दी गई हर यंत्रणा को निर्विरोध स्वीकार कर लेता है। मर्यादा के इस अंकुश के कारण ही वह दातादीन के सूद की पाई–पाई चुकाने का वादा करता है, जबकि गोबर सही हिसाब से कर्ज चुकाने का आग्रह कर चुका था। सामाजिक प्रथाएं और उसकी अपनी मान्यताएं उसके गले की फांसी बन जाती हैं। जमीन का मोह, कुल–मर्यादा का भय, प्रथाओं का पालन उसके चिरन्तर बन्धन बन जाते हैं। धर्म और नीति की यह डोर उसे मानवता से देवत्व की ओर खींचती जाती है। अपने आदर्श पथ पर चलता हुआ यह यथार्थ के संग्राम में एक के बाद एक पराजय का सामना करने के लिए विवश हो जाता है।

उसके जीवन में श्रम की ओर से कभी कोई विमुखता नहीं दिखाई गई। यहां तक कि अपने अन्तकाल तक वह श्रम करते–करते ही बेहोश होकर गिर जाता है। पर लघु भारतीय कृषक की नियति के अनुरूप उसके श्रम पर दूसरे तो पलते हैं पर वह और उसका परिवार सदा दरिद्र ही बने रहते हैं। ग्राम्य जीवन की तत्कालीन आर्थिक व्यवस्था के कारण वह बिसेसरशाह, झिंगुरी सिंह, दुलारी सहुआइन, मंगरूशाह, नोखेराम और दातादीन आदि सब का कर्जदार हो जाता है। जमींदार से मिलने जाते हुए अथवा भोला से गाय प्राप्त करने के अवसर पर उसी व्यवहार कुशलता अवश्य उभरती है। परन्तु यह उसका स्थिर स्वभाव नहीं है। दरिद्र होते हुए भी उसमें आत्म–सम्मान की लालसा अवश्य उभरती हैं वह विशाल और उदार हृदय है। उसमें मानव मात्र के प्रति सहानुभूति विद्यमान है। कुल मर्यादा उसके लिए प्राणों से भी अधिक मूल्यवान है। इसी कारण स्वयं से झगड़ने वाले और अपना अहित करने वाले हीरा और शोभा जैसे भाइयों के प्रति वह विस्तृत स्नेह रखता है और उनका बोझ उठाने को भी उद्यत रहता है। सरल चित होने के कारण न तो बाल की खाल उतारने में विश्वास रखता है और न निरर्थक झगड़ा पैदा करना चाहता है। प्रायः इन्हीं स्थितियों में स्वयं दब जाना ही तो उसकी नीति है, या उसकी नियति। समाज में भी और घर में भी। मर्यादा

का पालन उसका सबसे बड़ा धर्म भी है और बन्धन भी। वह आर्दशवादी है। धर्म, नीति और स्वार्थ के बीच वह डूबता–उतरता रहता है। भारतीय किसान की सारी विशेषताएं और कमियां उसके जीवन में साकार हो उठी हैं। होरी की दुनिया यथार्थ नहीं आदर्श की दुनिया है। वह सोचता है – ''सौ को दुबला करके एक मोटा होता है। ऐसे मोटेपन में क्या सुख? सुख तो जब है कि सभी मोटे हों।'' यथार्थ की दुनिया में तो दूसरों के सुख में ईर्ष्या उत्पन्न होती है। होरी की दुनिया आदर्श की दुनिया होने के कारण इसमें सबके सुख में अपने सुख की भावना समृद्ध होती है। इस दृष्टि से होरी कल्पना–लोक का प्राणी है। वह कभी–कभी ही इस ठोस धरातल पर विचरने आ जाता है। वह धरातल उस जैसे प्राणियों के अनुकूल नहीं है। इसीलिए लेखक उसे अन्त में इस लोक से दूर हटाने की योजना बनाकर अमरलोक का वासी बना देता है। उसकी हार में ही वह विजय का गौरव भरने का प्रयास करता है।

2. **धनिया :–** धनिया होरी की पत्नी और 'गोदान' की एक प्रमुख नारी पात्र है। होरी के अपने शब्दों में धनिया ''सेवा और त्याग की देवी, जबान की तेज, पर मोम जैसा हृदय, पैसे–पैसे के पीछे प्राण देने वाली, पर मर्यादा–रक्षा के लिए अपना सर्वस्व होम कर देने को तैयार'' रहने वाली नारी है। वह किसी भी परिस्थिति में होरी का साथ नहीं छोड़ती। वह सच्चे भारतीय अर्थ में अर्धागिनी है। वह होरी की तरह व्यवहार कुशल नहीं है, न ही वह किसी की खुशामद करना ही जानती है। अपने आचरण से, अपने व्यवहार से वह होरी को शक्ति देती है, उसकी सहायता करती है, उसे साहस देती है, उसे ढांढ़स बंधाती है और उसे डगमगाने से बचाती है। समय पर उसे आड़े हाथों भी लेती है और खूब सुनाती है। वह निडर है, निर्भीक है तथा उसी निडरता में वह कभी–कभी अदूरदर्शिता की सीमाओं तक भी पहुंच जाती है। क्रोध के कारण वह कभी–कभी प्रतिशोध और प्रतिहिंसा से भर उठती है, पर दूसरों की पीड़ा देखकर जल्दी ही द्रवित भी हो जाती है, और उल्टे सहायता के लिए उद्यत हो जाती है। वह जिस कार्य और बात को सही समझती है उसको करने या कहने के लिए वह जात–बिरादरी, समाज, कानून आदि किसी की परवाह नहीं करती। वह स्नेहपूर्ण तथा मातृ–भावना से सम्पन्न नारी है। वस्तुतः यदि होरी भारतीय किसान का प्रतीक है तो धनिया एक ग्रामीण नारी, एक कृषक–पत्नी का प्रतीक है। अपनी आचरण द्वारा वह कई बार न केवल अपने परिवार की बल्कि ग्राम की मान रक्षा करने में भी समर्थ होती हैं।

धनिया की प्रकृति कई बातों में होरी के सर्वथा विपरीत है। वह कल्पना में नहीं जीती, वह समाज के द्वारा नहीं, अपने तथा अपने परिवार के सुख–दुख में परिचालित होती है। वह अनुभव से सीखती है। दूसरों के लिए वह स्वयं को अनावश्यक संकट में डालना नहीं चाहती, और न ही वह अंधविश्वासों की नींव पर अपने भवन का निर्माण करना चाहती है। वह अति निर्धन पति की पत्नी है। उसका वह भरपूर साथ देती है और अपने सुहाग के तिनके के सहारे वह दरिद्रता का महासागर पार करने का प्रयास करती रहती है।

वह सूक्ष्म अन्तर्जगत की स्वामिनी है। वह कोमल प्रकृति की है। शीघ्र ही यदि वह क्रुद्ध होती है तो अकारण उससे भी जल्दी वह पिघल जाती है। भोला अपने पिता का घर छोड़कर गोबर के साथ भाग आने पर झुनिया को रोते देखकर सिलिया की अवस्था पर उसका एकदम पिघल कर कुछ भी करने को उद्यत होना उसकी इसी भाव–दशा को प्रस्तुत करता है। जब होरी का भाई उस पर शक करके उस पर सांझे का पैसा दबाने का आरोप लगाता है। तब होरी यह सहन नहीं कर पाता और गाय लौटाने का निर्णय करता है। पर धनिया आगबबूला हो जाती है। वह खूब खरी–खरी सुनाती है और चुनौती देती है कि गाय घर से गई तो अनर्थ हो जाएगा। इसी प्रकार हीरा के घर की तलाशी के अवसर पर पंच, दारोगा तथा गांव के समवेत जनों से भयभीत हुए बिना

वह, बिना संकोच होरी के अंगोछे से रिश्वत के लिए उधार लाए रूपये झटक देती है और सब को आड़े हाथों लेती हैं झुनिया को आश्रय देने में, और सिलिया को आश्रय देने में भी वह इसी निडरता का परिचय देकर समाज के अधिक सम्पन्न वर्ग के विरूद्ध पद–दलित का साथ देने का निर्णय लेती है।

वह पंचों से घृणा करती है, उन्हें राक्षस कहती है। होरी पर लगाए दण्ड को वह देने से साफ इन्कार कर देती हैं बिरादरी का हुक्का–पानी बन्द होने की उसे परवाह नहीं। पर होरी की कमजोरी, उसका भय धनिया की एक नहीं चलने देते और इस कारण सारा परिवार सदा शोषित होता तथा पिसता रहता है। वह बहुत आत्मसम्मानी भी है। पर तब वह हार जाती है जब अपना अन्न तो होरी दण्ड में दे देता है, और पुनिया उसकी सहायता के लिए कुछ अन्न लेकर आती है। वह यह सहायता स्वीकार भी नहीं कर पाती पर भीतर से प्रथम बार अपनी पराजय उसे स्वीकार करनी पड़ती है।

वह दृढ़–निश्चय नारी है। झुनिया को आश्रय देती है, उसे हर मूल्य पर निभाती है। वह झुनिया को घर से निकाल कर अपने बैल बचा सकती थी, पर वह भोला के सामने साफ इन्कार कर देती है। परिस्थितियों ने ही उसे कड़वा, तीखा और कर्कश बना दिया है, अन्यथा वह उदार नारी है। होरी की मूर्खताएं उसकी समाज–बिरादरी और अंधविश्वासों के समक्ष कमजोरी ही धनिया और परिवार के शोषण के कारण हैं। अपने सुहाग के लिए वह सब सहन करती है, पर होरी का साथ नहीं छोड़ती। अन्त में होरी ही उसे विधवा बनाकर छोड़ जाता हैं धनिया की कहानी करूणा की सजीव कथा है।

3. गोबर :– गोदान का महत्वपूर्ण पात्र, नई पीढ़ी के कृषक युवक का प्रतीक गोबर तेज और स्पष्टवादी है। वह जमींदारों, हाकिमों और महाजनों के हथकण्डों को समझता है। अपने पिता के विपरीत वह इस शोषण का शिकार बनने से साफ इन्कार कर देता है। पर एक तो उसके पिता की कमजोरी उसे कुछ भी नहीं करने देती। दूसरे उसके अपने पास भी क्षणिक आवेश तो है, पर किसी निश्चित दृष्टि या योजना का अभाव है। वह अपने पिता, माता, समाज और शोषितों के प्रति केवल आवेशपूर्ण विद्रोह मात्र करके चुप रह जाता है। खण्डन, आलोचना और विद्रोह में वह अवश्य प्रबल है। शहर से लौटकर वह गांव में एक–एक की खबर लेता हैं पर यह सब जबानी जमा–खर्च ही है। इसी प्रकार वह छिप कर देखता है कि झुनिया के प्रति उसके माता–पिता बुरा व्यवहार करेंगे तो वह महाभारत मचा देगा। उसकी यह वृति नगर में भी तथा झुनिया के प्रति भी प्रकट होती हैं परन्तु रचनात्मक बुद्धि तथा निर्माणात्मक योजना का उसमें अभाव है। इस आवेश और अदूरदर्शिता के कारण ही वह गांव से शहर, फिर शहर व गांव के बीच मारा मारा फिरता है। उसमें उत्तरदायित्व निर्वाह का भी अभाव है। झुनिया से वह प्रेम करता है, पर उसका भार उठाने की बजाय नगर भाग जाता है। पिता के शोषकों के प्रति वह क्रोध तो दिखाता है, पर व्यावहारिक समाधान नहीं कर पाता। पहली बार नगर में वह कुछ श्रम भी करता है, पर दूसरी बार वह बिगड़ जाता है। अन्त में प्रेमचन्द उसके व्यक्तित्व में भारी परिवर्तन और विकास ले आते हैं। वह काफी बुद्धिमान् हो जाता है। वह यह स्वीकार कर लेता है कि अपना भाग्य उसे स्वयं बनाना होगा। कोई देवता अथवा गुप्त शक्ति उसकी सहायता के लिए नहीं आएगी। पहले की उद्‌दंडता और गर्व के स्थान पर अब उसमें गहरी संवेदना का संचार होता है। वह अधिकार की जगह अब अपना कर्तव्य पहचानने लगता है। वह नम्र तथा उद्योगशील हो जाता है। वह पिता के प्रति किए गए अपने दुर्व्यवहार के लिए पश्चाताप भी करता है।

'गोदान' के कथानक में गोबर की भूमिका महत्वपूर्ण है। अपनी सारी कमजोरियों के बाद भी वह बदलते युग और बदलती स्थितियों का प्रतीक है। वह होरी की पीढ़ी के शोषण के विरूद्ध खड़ी होने वाली नई पीढ़ी का सूचक है। वह ग्राम और नगर के बीच सूत्र बनाने वाली नई पीढ़ी का भी प्रतीक है। गोबर का युग वह युग था जब नवयुवक बड़ी संख्या में नगरों में जाकर अपना आर्थिक भविष्य सुधारने के साथ–साथ ग्राम की सामाजिक तथा वैचारिक व्यवस्था में भी परिवर्तन का उपक्रम करते थे।

वह लम्बा, सांवला, इकहरा युवक है। युवकोचित विद्रोह और असन्तोष से भरपूर, गोबर अपनी आर्थिक परिस्थितियों से खिन्न रहता है। जमींदारों की विलासिता तो उसमें और प्रबल, ईर्ष्या तथा क्रोध भर देती है, पर इसके परिशमन का वह अवसर भी नहीं पाता, तथा होरी भी इस आग को अधिक भड़कने नहीं देता। वह यह मानता है कि अमीरों का भजन–पूजन सब ढोंग है और वह पाप का धन हजम करने के लिए ही यह पाखण्ड करते हैं। पिता का धर्मात्मापन भी उसे पसन्द नहीं। पर वह स्वयं भी दुनिया की चालों से अनभिज्ञ है। हां, वह सीधा सोचता व सीधा आचरण करता है। झुनिया से प्रथम सम्बन्ध उसके यौवन के उफान की परिणति है, पर उसका गर्भवती होना गोबर में और उत्तरदायित्व की भावना जगाता है। चारित्रिक विकास की दृष्टि से वह 'गोदान' का सर्वोत्कृष्ट पात्र है।

नगर में आने पर उसमें तेजी से परिवर्तन होता है। वह राजनीति समझने लगता है। राष्ट्र और वर्ग का अर्थ समझता है, सामाजिक रूढ़ि, लोकनिन्दा, परम्परा आदि के प्रति उपेक्षापूर्ण होता जाता है। बाहरी तौर पर भी वस्त्र–परिधान, बीड़ी–पान, अंग्रेजी काट के बाल आदि उसके त्वरित परिवर्तन के सूचक हैं। इसी निर्भयता के कारण ही वह गांव लौटता है, और सब की खबर भी खूब लेता हैं थोड़ी बहुत व्यवहार–कुशलता भी उद्दण्डता के साथ–साथ उसमें आ गई है। भोला से मैत्री स्थापना और अपने बैल वापिस लाने में वह इसका प्रदर्शन करता है। पंचों पर भी उसका असर पड़ता है। वे उससे झिझकते हैं, दिल से जलते और ऊपर से खुशामद करते हैं।

उसकी आत्मा में पवित्र संस्कार दोबारा गांव से नगर लौटने पर ही जागते हैं। रूपा के विवाह के अवसर पर जब वह फिर गांव लौटता है तो वह वास्तविक शिष्टता, सरलता, नम्रता और सेवा के गुणों से पूर्ण होकर आता है। पहले वह होरी को दोषी मानता था। अब वह उसकी विवशता को समझता है। होरी की भूल भी बड़ी शिष्टता के साथ सांकेतिक करता है। प्रेमचन्द को किसान की बुद्धि और साहस का विकास देखने की इच्छा, उसे आत्म–निर्भर बनाने की कामना और अन्ध–परम्पराओं से मुक्ति का स्वप्न गोबर के चरित्रा–विकास में भी सिद्ध होता प्रतीत होता है।

4. झुनिया :– भोला अहीर की इस विधवा बेटी का 'गोदान' के कथा–विकास में, ग्राम और नगर कथा के सम्पर्क–सूत्र रूप में तथा विशेष रूप से गोबर के चरित्र–विकास में विशेष महत्व है। विधवा–समस्या के साथ भी इसका सम्बन्ध है। वह अशिक्षित है, पर मानव वृतियों को खूब समझती है। चरित्र की दृढ़ पर साथ ही संवेदना से पूर्ण युवती है। वह स्थिर है, उसमें चंचलता का अभाव है और वह संयत है। विवाहिता न होने पर भी गोबर के साथ वह विवाहित का–सा जीवन व्यतीत करती है और ममता, दया, सेवा की भावना का समय–समय पर परिचय देती है।

वह सुन्दर और सुघड़ है। प्रेम के सम्बन्ध में अनुभवी है। प्रथम भेंट में ही वह गोबर को नाप–तोल लेना चाहती है। वह ऐसे प्रेम की आकांक्षा करती है जिसके सहारे पूरा जीवन जिया और मरा जा सके। गोबर में उसे रसिकता और समर्पण दोनों दिखाई देते हैं। वह यौवन में अपने अनुभवों द्वारा अद्भुत संयम से गोबर को अभिभूत और वशीकृत कर लेती है। गर्भवती झुनिया इस

नई परिस्थितियों में धैर्य और कौशल दोनों का परिचय देती है। चंचलता और स्थिरता, विवेक और संवेदनशीलता झुनिया के चरित्र की महत्वपूर्ण विशेषताएं हैं।

गोबर के चारित्रिक विकास के लिए झुनिया के उदात्त गुणों का विशेष महत्व है। गोबर उस पर अत्याचार करता है। मारपीट करता है। उसकी वह अपेक्षा करता है। इसी अवस्था में वह एक पुत्र को जन्म देती है। पर मिल हड़ताल के आन्दोलन में घायल गोबर को देखते ही झुनिया की दया, ममता तथा सेवा का बांध खुल जाता है। उसकी उदात्तता गोबर को भी उदात्त बना देती है। वह स्वयं घास छीलती है, घर का काम–काज करती है, पर सदा उत्साह–उल्लास से भी रहती है। उसका तन–मन एक बार फिर स्वस्थ और सुन्दर हो उठता है। अपने पवित्र प्रेम, सेवा, त्याग आदि द्वारा वह अपना तथा गोबर का उन्नयन करती है। वे मेहता–मालती जैसे शिक्षित जनों के भी प्रिय हो जाते हैं और गांव लौटने पर उन्हें समुचित मान–सम्मान भी प्राप्त होता है।

5. **रायसाहब अमरपाल सिंहः–** अवध के ताल्लुकेदार रायसाहब अमरपाल सिंह की ताल्लुकेदारी में ही होरी किसान रहता था। रायसाहब का चरित्र गांव की कथा के सूत्र संयोजन में सहायक है, होरी तथा अन्य किसानों की दशा को अधिक गहराता है तथा नगर कथा के ग्राम–कथा के सूत्रों को जोड़कर उसे और भी अधिक गम्भीर बनाता है। उसका ऐश्वर्य, धन–सम्पत्ति, मान सम्मान सब व्यवस्था की देन है, यह होरी जैसे किसानों के शोषण का परिणाम है, रायसाहब उपार्जित नहीं। वह शानबान से रहते हैं, महल बनवाते हैं, नौकर–चाकरों की सेना रखते हैं, धूम–धाम से मेले–त्यौहार तथा उत्सव मनाते हैं, बेटी के विवाह में, पुत्र के ऐश–आराम पर निर्वाचन में मान प्राप्त करने में, मुकदमेबाजी में, नगर के मित्रों के साथ सैर तथा दावतों में और सम्पादक का मुंह बन्द रखने के लिए वह हजारों–लाखों का व्यय–अपव्यय करने में संकोच नहीं करते। दूसरी और उनके माध्यम से वह व्यवस्था, इस विषमता के उद्घाटन और होरी जैसे किसानों तथा कृषि मजदूरों की विडम्बना को और अधिक गहराई से स्पष्ट करने में सहायक होते हैं।

रायसाहब के चरित्र में भी गहरी द्विविधा विद्यमान है। जो उन्हें एक वर्ग का प्रतिनिधि होने पर भी एक निजी व्यक्तित्व में सम्पन्न पात्रा के रूप में भी प्रस्तुत करती है। वह किसानों से सहानुभूति रखते हैं तो उन्हें लूटते भी हैं, धन संचय करते हैं तो यश भी चाहते हैं। राष्ट्रवादी भी हैं तो अंग्रेज शासन के अधिकारी वर्ग से मेल मिलाप भी बनाए रखते हैं। कौंसिल की सदस्यता त्याग कर, सत्याग्रह करके जेल भी जाते हैं, पर साथ ही अधिकारियों को उपहार, डाली और दस्तूरी भी भिजवाते हैं। साहित्य, संगीत, कला, अभिनय, सभा अधिवेशन सब में इनकी रूचि है। भाषण लेखन, शिकार, पूजा–पाठ, लोकाचार, साथ–साथ भौतिक सुखोपभोग तथा उन्नति की प्रबल इच्छा का समन्वय इनके व्यक्तित्व से प्राप्त है। पर कथनी करनी में खूब अन्तर है। समाज–सुधार और शोषण, जमींदारी की निन्दा और उसी व्यवस्था के कलुष पक्ष बेगार, लगान–वृद्धि कुड़की, बेदखली सब साथ–साथ चलते हैं।

सन्तान–प्रेम इनकी विवशता है। पत्नी की मृत्यु पर सन्तान–प्रेम में जीवन लगा देते हैं। धन, यश, मान, सम्मान, सुख आदि हर प्रकार की प्रबल इच्छा रायसाहब को अस्थिर और असन्तुष्ट बनाए रखती है। जीवन की कृत्रिमता और वाणी में चातुर्य के कारण वह अपने आन्तरिक रूप को प्रायः छिपाने में सफल हाते हैं। अपने तर्कों द्वारा अपना काम निकालने और स्वयं अपने तथा अपने वर्ग की बुराई करके सामने वाले के मन में कोमल भाव जगाने में वह समर्थ है। अपने संकल्प के लिए सब कुछ दांव पर लगाने की भी इनमें सामर्थ्य हैं। पर अन्ततः अपने बुद्धिबल, धन–बल, जन–बल आदि से भौतिक उन्नति करके भी वह प्रबल और सन्तुष्ट नहीं हो पाते। सन्तान की ओर से भी इन्हें सुख और सन्तोष नहीं मिल पाता। रायसाहब और होरी को आमने–सामने रखकर जहां

शोषण की व्यवस्था उद्घाटित हुई है वहां यह भी रेखांकित किया गया है कि केवल धन–सम्पत्ति से कोई सुखी नहीं हो सकता, अन्यथा रायसाहब से अधिक सुखी और सन्तुष्ट और कौन हो सकता है।

6. **चन्द्रप्रकाश खन्ना :** यह पात्र शोषक वर्ग का प्रतीक, गिरती सामन्ती व्यवस्था और उभरती हुई पूंजीवादी व्यवस्था का परिचायक है। वह बैंकर है, शक्कर मिल का मैनेजिंग डायरेक्टर है, बीमा कम्पनी का स्वामी है, पूंजीपति हैं। रायसाहब जैसे ताल्लुकेदार को भी अपनी बिगड़ी दशा और अनाप–शनाप के खर्चों के कारण इसकी शरण में आना पड़ता है। इसका धर्म, मूल्य, जीवनादर्श सब धन है, और इसके लिए वह कुछ भी करने को उद्यत है। आवश्यकता से अधिक और बिना यथार्थ श्रम के धन आए तो अनेक चारित्रिक दोष भी साथ ही आ जाते हैं। खन्ना में वे सब दोष हैं। वह मालती का दीवाना है। उसके तितलीपन के ऊपर वह मंडराता रहता है और उसके आदेश पर कुछ भी करने को उद्यत है। इसी कारण वह अपनी सती–साध्वी और विचारशील पत्नी गोबिन्दी का अपमान और अवमानना करता है।

पर अन्त में प्रेमचन्द उसके चरित्र के शुक्ल पक्ष को उभारने में सफल होते हैं। मालती की प्रताड़ना मिल में आग लगने से होने वाली हानि तथा पत्नी गोबिन्दी की अनन्य सेवा और साहचर्य के कारण उसके व्यक्तित्व में परिवर्तन आता है। वह धन व धन के मोह का बोझा सिर से उतर जाने पर प्रसन्न दिखाया गया है। वह लोक–सेवा में रत हो जाता है। गोबिन्दी का अपमान करने के बजाय अब उसका आदर करता है और उसके हर आदेश का पालन करता है। मानव धर्म की इस प्रतिष्ठा से खन्ना का जीवन आदर्श हो गया है। अब वह शोषक वर्ग का प्रतिनिधि न होकर मानव–धर्म का प्रेरक बन जाता है।

7. **प्रोफेसर मेहता :–** मेहता दर्शन शास्त्र का प्रोफेसर है। वह अविवाहित, एकांकी जीवन जीता है। उसका जीवन यथार्थ के बजाय आदर्श तथा कल्पनालोक में ही अधिक स्थिर है। इस कथा में मेहता की कोई विशेष संगति लक्षित नहीं होती पर जितना तथा जैसा उपक्रम प्रेमचन्द उसके व्यक्तित्व के विकास तथा उसके बारीक से बारीक चित्रण का करते हैं, उससे मेहता वस्तुतः लेखक के विचारों का ही प्रतिनिधि बन जाता है। लेखक अपने पर्याय डाक्टर मेहता को ग्राम कथा के साथ जोड़ देता है। कथा नायक होरी के परिवार के साथ भी इसे सायास जोड़ता है। गोबर को इसके निकट सम्पर्क में लाता है। हर सभा तथा अन्य आयोजनों में मेहता के माध्यम से ही लेखक विभिन्न विषयों सम्बन्धी सैद्धांतिक और वैचारिक मत प्रसारण करता है; पर आदर्श और सिद्धांत की दुनिया में जीने वाले इस पात्र का व्यक्तित्व जड़ रूप में चित्रित नहीं हुआ है। उसका विकास भी बहुत सजीव और वास्तविक रूप में होता है।

मेहता बहुत विचारशील व्यक्ति है। हर विषय के बारे में गम्भीर चिन्तन करता है और तद्नुरूप व्यवहार का प्रयास करता है। वह व्यावहारिक दृष्टि से कोरा है। अपनी आय का बड़ा भाग निर्धन छात्रों को छात्रवृति देने में लगा देता है। स्वयं प्रायः खाली ही रहता है। घर के रख–रखाव, अपने वस्त्र आदि की ओर इसे कोई ध्यान नहीं है। नारी का वह विशेष आदर करता है। उसे वह मानवता के विकास का शिखर मानता है। नारी का त्याग, तपस्या, क्षमा और अहिंसा उसके वे महान् गुण हैं जो मानवता की उच्चतम उपलब्धि हैं। अतः वह मालती की ओर से आरम्भ में उपेक्षापूर्ण रहता है, और बीच में भी मानों परीक्षक के रूप में उसकी परीक्षा करता रहता है। खन्ना की पत्नी गोबिन्दी का वह बेहद आदर करता है और उसे मातृत्व तथा नारीत्व का आदर्श मानता है। बाद में मेहता से सम्पर्क के कारण जब मालती के चरित्र का भी उदात्तीकरण हो जाता है तो मालती के समक्ष वह परीक्षक से परीक्षार्थी बन जाता हैं। वह प्रणय निवेदन करता है, आदर्श से यथार्थ के धरातल पर आ

जाता है। पर तब तक तितली मालती कर्मठ मधुमक्खी बन चुकी है। मेहता के व्यक्तित्व का मालती के चरित्र–विकास में बहुत महत्व है। पर मालती अपने विभिन्न रूपों में मेहता के चरित्र–विकास में बहुत सहयोग देती है। अब वह मित्र रूप में मेहता के साथ रह सकती है। पत्नी रूप में नहीं। पर इससे मेहता के चरित्र का स्खलन या ह्रास नहीं होता। केवल सैद्धान्तिक मेहता अब अधिक सन्तुलित हो जाता है। सैद्धान्तिक और व्यवहारिक जीवन का यह मिलन मेहता के चरित्र को उच्चतम स्तर पर ले जाता है।

मेहता जगत्, नर, नारी, विवाह, मार्क्सवाद, समता, शोषण, त्याग, मातृत्व आदि अर्थात् जीवन सम्बन्धी हर विषय पर सुचिन्तित विचार व्यक्त करता है। यहां तक कि वह विज्ञान के उपयोग से उपजवृद्धि आदि पर भी निश्चित विचार व्यक्त करता है। वस्तुतः मेहता इस उपन्यास के विचार पक्ष का प्रतिपादन करने वाला, लेखक का अपना प्रतिरूप है। प्रेमचन्द सायास इस व्यक्तित्व को सजीवता प्रदान करके गोदान के महत्वपूर्ण पात्र–रूप से गठित करते हैं।

8. **मालती :–** बाहर से तितली और अन्दर से मधुमक्खी मालती का चारित्रिक विकास गोदान की बहुत बड़ी विशेषता है। व्यवसाय से लेडी डाक्टर, सामाजिक कार्यक्रमों की अग्रणी, सभा–सोसायटी की प्राण मालती का प्रथम दर्शन रायसाहब के धनुष–यज्ञ के अवसर पर होता है। अपने वस्त्राालंकार, अपनी साज–सज्जा, अपनी वाक्–पटुता अपनी चतुराई से वह पुरूषों को सदा अपने गिर्द भंवरे के समान मंडराने पर मजबूर करती है पर उसकी उपेक्षा करने वाले प्रोफेसर मेहता का पुरूषत्व उसे कहीं गहराई से छू जाता है और वह उसकी ओर आकर्षित होती है। शिकार प्रसंग में वह उसके और भी निकट आ जाती है। मेहता उन अन्य पुरूषों से भिन्न हैं, जो मालती के एक इशारे पर नारी–लोलुपता में कुछ भी कर सकते हैं। मालती के सन्दर्भ में वन की एक काली कलूटी स्त्री की सेवा, त्याग और मेहता के गुणगान से वह और भी अधिक प्रभावित होती है और उसका चारित्रिक विकास प्रबलवेग से होने लगता है। वैसे भी वह केवल बाहर से ही तितली थी। वह अपने अपाहिज पिता के अनाप–शनाप खर्चों को, अपनी माता तथा दो बहनों के पूर्ण भार को स्वयं उठाती है। हां, वह पुरुष वर्ग को अपने नारीत्व के आकर्षण से पराभूत करती है। पर जब मेहता जैसा आदर्श तथा सेवा भाव सम्पन्न पुरुष उसके निकट आता है तो उसके आंतरिक गुणों का प्रबलता से विकास होता है।

क्रमशः वह एक ओर मेहता की ओर अधिकाधिक आकृष्ट होती जाती है, दूसरी ओर उसकी मानव सेवा, त्याग, ममता आदि गुणों का विकास तेजी से होता है। ग्राम–विकास के कार्यों में गोबिन्दी तथा गोबर के पुत्र मंगल की बिमारी में तथा उसके जीवन में बाहर सम्पूर्ण परिवर्तन उसके आन्तरिक गुणों के प्रस्फुटन का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। वस्तुतः वह उच्चता के उन शिखरों को स्पर्श करने लगती है कि मेहता की पकड़ से वह बहुत ऊपर उठ जाती है। उसका परीक्षक मेहता अब स्वयं परीक्षार्थी और आवेदक बन जाता है। पर मालती अब उसके विवाह के प्रस्ताव को अस्वीकार कर देती है और मित्रवत रहने का प्रस्ताव करती है।

मालती का चरित्र–विकास मानवता के प्रति आस्था और विश्वास को बल देता है। वह प्रेम, उत्साह, परोपकार, आदि गुणों की विमल ज्योति का प्रसार कर देती है। मेहता बुद्धि रूप है तो मालती हृदय–रूपिणी है। भाव और बुद्धि के सामंजस्य का पवित्र सन्देश लेकर मालती अपना जीवन धन्य बना लेती है। विवाह केवल लौकिक मिलन है। मेहता और मालती का अब आलौकिक मिलन होता है, आध्यात्मिक सामंजस्य पैदा होता है। 'गोदान' में मेहता और मालती के चरित्रों का निर्माण और उनका विकास इस उपन्यास को बहुत ऊंचा वैचारिक तथा चिन्तनात्मक धरातल प्रदान करने का महत्वपूर्ण साधन बनता है।

9. मातादीन :– मातादीन धर्म के विकृत रूप को और उसके बीच में मानवता के सोए बीजों को अंकुरित होते दिखाने के उपक्रम के रूप में 'गोदान' में अवतरित हुआ है। दातादीन ब्राह्मण और सूदखोर महाजन का पुत्र है। दातादीन धर्म के विकृत, काले, शोषक रूप का प्रतीक है। एक ओर वह हर विधि से संस्कार द्वारा, महाजनी द्वारा, पंचायती षड्यंत्रों द्वारा, दूसरों की जमीन–जायदाद दबाने के द्वारा किसानों को लूटता है तो दूसरी ओर अन्यों के जीवन तथा व्यवहार पर धर्म के आधार पर निर्णय देकर उन्हें दण्ड आदि देता है। होरी तथा अन्य कृषकों के शोषण में दातादीन जैसे लोगों की भूमिका रायसाहबों अथवा खन्ना जैसे पूंजीपतियों की अपेक्षा अधिक भयंकर है। वह पूरी तरह विकृत धर्म और अर्थ–व्यवस्था का प्रतीक है।

पर उसी का पुत्र मातादीन सिलिया नाम की एक चमार–कन्या से प्रेम में उलझ जाता है। चमारिन के प्रति पुत्र के इस अनुचित सम्बन्ध के बाद भी दातादीन व उसका परिवार अपने ब्राह्मणत्व के अभिमान से पूर्ण हैं। वे धर्म का अर्थ स्नान–पूजा, खान–पान की शुचिता तथा विवाह की व्यवस्था में ही देखते हैं। पर उनके धर्म के कच्चे धागे को तब तोड़ दिया जाता है जब सिलिया के घर वाले मातादीन के मुंह में हड्डी डालकर उसका धर्म भ्रष्ट कर देते हैं। इस पर भी उसका पिता अपने कर्मकाण्ड के सहारे उसके प्रायश्चित और शुद्धि का आयोजन करके धर्म के और भी अधिक विकृत और दो मुंहे रूख का उद्घाटन करता है। पर मातादीन के चरित्र में परिवर्तन आता है। लेखक उसके चरित्र का विकास करता है। वास्तविक धर्म का साक्षात्कार उसे पवित्र बना देता है। वह समाज के बाह्य धर्म पर मानवता के आन्तरिक धर्म की पुकार पर खुले आम सिलिया के साथ झोंपड़ी में रहने लगता है। वह लोक–लाज और लोक–निन्दा की भावना से ऊपर उठ जाता है। सिलिया से वह क्षमा–याचना करता है और कहता है कि वह ब्राह्मण नहीं, चमार ही बनकर रहना चाहता है, जो अपना धर्म पाले वही ब्राह्मण है। उसके जीवन की इस कृतार्थता से प्रेमचन्द मानव धर्म के वास्तविक रूप के दिग्दर्शन का उपक्रम करते हैं।

10. सिलिया :– हरखू चमार की बेटी सिलिया का चरित्रांकन मातादीन के चरित्र के स्पष्टीकरण तथा उसके माध्यम से धर्म के जड़, शोषणपूर्ण तथा मूर्खतापूर्ण रूप के उद्घाटन के लिए हुआ है। सिलिया चमारिन तथा मातादीन ब्राह्मण का आकर्षण अथवा प्रेम कोई अनहोनी बात नहीं। इसमें विडम्बना दातादीन जैसे ब्राह्मण के बाहरी जनेऊ, तिलक, खान–पान की शुद्धता के आधार पर अपनी उच्चता और श्रेष्ठता के प्रतिपादन में है।

सिलिया सांवली–सलोनी, छरहरी बालिका थी जो रूपवती न होकर भी आकर्षक थी। उसके हास में, चितवन में, अंगों में विलास के हर्ष का उन्माद था, जिससे उसकी बोटी–बोटी नाचती रहती थी। उसके चरित्र में दृढ़ता और अस्थिरता का स्वाभाविक सामंजस्य मिलता है। मातादीन उसे दुर्व्यवहार करता है, पर जब–जब उसके पिता और भाई–बन्धु मातादीन से इसका बदला लेते हैं तो उसकी सम्पूर्ण सहानुभूति मातादीन के प्रति हो जाती है। अनुचित सम्बन्ध होने पर भी वह पूर्ण समर्पिता के रूप में माता–पिता को छोड़ कर मातादीन की आषा में होरी तथा धनिया की शरण में रहते हुए मज़दूरी करके जीवन व्यतीत करती है। सिलिया के पुत्र की मृत्यु पर ही मातादीन का उद्धार होता है। वह सब कुछ छोड़ कर सिलिया के पास आ जाता है। वह बुरे कर्म छोड़कर मानवता की ओर अग्रसर होता है। लेखक ने इन पात्रों के माध्यम से समाज की रूढ़िग्रस्त व्यवस्था पर चोट की है।

1.3.3 सारांश :

'गोदान' में और भी बहुत से पात्र हैं। शोषक वर्ग में दातादीन, मंगरुषाह और दुलारी आते हैं। होरी के परिवार में उसकी दो बेटियां सोना और रूपा हैं, उसके दो भाई हैं हीरा और शोभा। इसी तरह के अन्य असंख्य पात्रों का चित्रण करने के बाद भी प्रेमचन्द चरित्र–विन्यास का संगत निर्वाह करने में समर्थ रहे हैं जो उनकी सफलता का महत्त्वपूर्ण आधार है।

पाठ संख्या–1.4

‘गोदान’ का संरचनात्मक विवेचन

इकाई की रूपरेखा

1.4.0 उद्देश्य

1.4.1 प्रस्तावना

1.4.2 गोदान का संरचनात्मक विवेचन

1.4.3 सारांश

1.4.0 उद्देश्य :

प्रस्तुत पाठ को तीन भागों में विभाजित किया गया है। प्रथम भाग में परम्परित तत्वों के आधार पर गोदान का विवेचन, विश्लेषण तथा मूल्यांकन का प्रयास हुआ है। तात्विक विवेचन में भाषा शैली एक महत्वपूर्ण और अनिवार्य पक्ष है, पर ‘गोदान’ की भाषागत विशिष्टता पर अलग से कुछ अधिक गम्भीर विचार का प्रयास दूसरे भाग में हो रहा है। इसका कारण यह है कि हिन्दी गद्य लेखन को उसका सशक्त मुहावरा देने का श्रेय मुख्य रूप से प्रेमचन्द को दिया जाता है। इस पाठ के तीसरे भाग में महाकाव्य के तत्वों अथवा महत् रचना के रूप में ‘गोदान’ के स्थान तथा महत्व पर विचार हो रहा है।

1.4.1 प्रस्तावना :

‘गोदान’ की कथा का मुख्य आधार अवध प्रान्त के सेमरी ताल्लुके के बेलारी गांव का छोटा किसान होरी तथा उसका परिवार है। कथा के अन्य सूत्र इस मुख्य कथा के आस–पास संयोजित हुए हैं। कथा का विस्तार ग्राम तथा नगर दोनों धरातलों पर हुआ है और बहुत सूक्ष्म सूत्रों द्वारा दोनों कथाओं को परस्पर सम्बद्ध कर दिया गया है। इस दोहरे कथानक में जहां विशेष देश और काल का समग्र परिवृत उद्‌घाटित हुआ है, वहा ग्राम के कृषि–संदर्भित और नगर के उद्योग तथा अन्य सेवाओं पर आधारित जीवन के स्पष्टीकरण द्वारा संदर्भित स्थिति के लिए एक–दूसरे की भूमिका को भी अधिक स्पष्ट समझ पैदा हुई है।

1.4.2 गोदान का संरचनात्मक विवेचन :

‘गोदान’ की कथा कल्पित तथा मौलिक है और पूरी तरह सम्भाव्यता के गुण से सम्बन्धित है। इन गुणों के साथ–साथ इसमें रोचकता का गुण भी भरपूर मात्रा में विद्यमान है। कथा का विकास बहुत सहज और स्वाभाविक है। उपन्यास के सारे पात्र अपनी–अपनी रूचि और प्रकृति के अनुरूप कार्य करते हैं। अतः उनके द्वारा घटित घटनाएं स्वाभाविक हैं, और बिना रोक–टोक के आगे बढ़ती हैं। परिस्थितियों का विकास भी पात्रों की रूचि और प्रकृति के अनुरूप ही हुआ है। रोचकता के लिए घटनाओं का श्रृंखलाबद्ध विकास भी अपेक्षित है, और ‘गोदान’ के कथानक में यह गुण भी

स्पष्ट रूप से विद्यमान है। कथानक की रोचकता की दृष्टि से संघर्ष भी आवश्यक तत्व है। 'गोदान' में होरी का सारा जीवन ही संघर्षों की एक लम्बी दास्तान है। इसी प्रकार गोबर–झुनिया, मातादीन–सिलिया, मेहता–मालती, खन्ना–गोबिन्दी आदि सब पात्रों के जीवन के संघर्ष का बहुत सहज और स्वाभाविक समावेश हुआ है।

गठन की दृष्टि से अवश्य 'गोदान' पर बहुत विचार हुआ, और विद्वानों के इस सन्दर्भ में काफी मतभेद पाया जाता हैं 'गोदान' का कथानक नगर और ग्राम की दोहरी कथाओं के संयोजन पर आधारित है। कुछ विद्वान् तो इसे 'गोदान' की सफलता तथा प्रभविष्णुता का कारण मानते हैं तो विद्वानों का दूसरा वर्ग दोहरे कथानक को 'गोदान' की शिथिलता के कारण मानता है। कथानक की दृष्टि में इस मतभेद पर विचार उपयोगी होगा।

ये दोनों मुख्य प्रसंग दो प्रधान तथा स्वतन्त्र कथाएं कहला सकती हैं। परम्परित धारणा के अनुसार किसी भी समांख्यानात्मक साहित्य विधा में केवल एक मुख्य घटना होनी चाहिए। अन्य कथाएं, घटनाएं, प्रसंग आदि मुख्य कथा से सम्बद्ध रूप में, गौण, अवांतर अथवा कम महत्वपूर्ण रचनाओं के रूप में ही होनी चाहिएं। 'गोदान' में मुख्य कथा तो अवश्य होरी, होरी–परिवार तथा उसके ग्राम–समाज की ही है, पर नगर कथा को उसकी अवांतर कथा तथा प्रसंग नहीं कहा जा सकता। अपनी सम्पूर्णता अपने अंगों–उपांगों में यह एक स्वतन्त्र कथा है। जिसे कुछ हल्के–हल्के संस्पर्शों द्वारा यहां वहां ग्राम–कथा से जोड़ दिया गया है।

'गोदान' में दो स्वतन्त्र कहानियां हैं क्या ये प्रायः असम्बद्ध रूप में, स्वतन्त्रापूर्वक विकसित होती हैं? इस विषय पर समीक्षकों ने बहुत विचार किया है। आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी इस आयोजन की उपमा एक ही मकान के दो खण्डों में रहने वाले दो परिवारों से देते हैं जिनका परस्पर कोई व्यावहारिक सम्पर्क–सम्बन्ध न हो। दोहरे कथानक की पुष्टि में एक तर्क यह दिया जा सकता है कि ग्राम–कथा आधिकारिक कथा है, जबकि नगर–कथा प्रासंगिक। प्रासंगिक कथा का आयोजन आधिकारिक कथा को स्पष्ट एवं प्रभावशाली बनाने के उद्देश्य से ही हुआ है। दूसरा तर्क यह हो सकता है कि लेखक अपनी रचना द्वारा एक जीवन–दर्शन देना चाहता है। मध्यवर्गीय शिक्षित समाज के क्रिया–व्यवहार, चिन्तन–अनुचिन्तन, वाद–विवाद, आन्दोलन–सुधार आदि द्वारा ग्राम की आधिकारिक कथा उसके पात्रों, उनकी समस्याओं और उनके समग्र मानसिक, नैतिक और सामाजिक ढांचे को अधिक स्पष्टता से स्थापित–विवेचित किया जा सकता है – कुछ समीक्षक इन तर्कों की निर्बलता और असंगति को सिद्ध करने का प्रयास करते हैं एक प्रश्न यह भी है कि क्या दोनों कथाओं में ऐक्य स्थापित हो पाया है या नहीं? इस सम्बन्ध में भी बहुत्तर धारणा यही है कि रायसाहब अमरपाल सिंह और गोबर ही दो ऐसे पात्र हैं जो कथाओं की एकता की दृष्टि से उपयोगी हैं। पर यह सम्पर्क सूत्र बहुत सूक्ष्म और कमज़ोर–सा ही है। परन्तु गम्भीरता से देखा जाए तो लगभग स्वतन्त्र दो कथानकों के आयोजन द्वारा भी प्रेमचन्द ने कहीं कला सौंदर्य में विकार उत्पन्न होने की अनुमति नहीं दी है। वास्तव में समाज ही 'गोदान' का वर्ण्य–विषय है। समाज के तीन मुख्य वर्ग इस कथानक में ग्रहण किए गए हैं – शोषक, शोषित तथा सुधारक। शोषित समाज बड़ा है, विस्तीर्ण है तथा उसके प्रति सहानुभूति मुख्य लक्ष्य होने के कारण ग्राम–कथा आधिकारिक प्रतीत होती है, पर शोषकों के क्रिया कलापों के बिना तथा सुधारने के चिन्तन–अनुचिन्तन सुधार आदि के प्रयास एवं सफलता–विफलता के बिना समाज का यह चित्रा अधूरा ही रह जाता। इस तर्क के आधार पर दोहरे कथानक की सार्थकता उपयोगिता और संगति को स्वीकार किया जा सकता है।

वस्तुतः नगर कथा होरी की करूणाजनक कहानी का ही अंग बन गई है। यदि दोनों कथानकों में कुछ और अधिक निकटता लाने का प्रयास किया जाता तो शायद उसमें वह मार्मिकता न आ पाती जो अब प्राप्त है। सुधारक वर्ग के प्रयासों का या तो फैशन मात्र एवं अवास्तविक होना, अथवा उनके प्रयासों की विफलता द्वारा भी मुख्य कथा को बल मिला है और शोषक वर्ग के चरित्र पर भी अधिक प्रकाश पड़ सकता है। नगर पात्रों के चरित्र के विकास में भी ग्राम पात्रों का प्रत्यक्ष और परोक्ष प्रभाव स्वीकार किया जा सकता है। मिर्जा, मेहता, मालती आदि का चरित्र विकास इसका उदाहरण है।

यह प्रेमचन्द की अपनी धारणा रही है कि उपन्यास की घटनाएं नाटक की भांति एक ही केन्द्र पर मिल पाएं, यह आवश्यक नहीं। अतः कथा वस्तु के निर्माण में दो स्वतन्त्र कथाओं की कल्पना करने सम्बन्धी दोष–दर्शन उचित नहीं कहा जा सकता। गोदान की कथा का प्रवाह भी प्रायः निर्दोष है। थोड़ी बहुत कमियों के बावजूद भी अपने कथानक के संदर्भ में 'गोदान' को एक सफल उपन्यास मानने में कोई झिझक नहीं होनी चाहिए।

पात्र एवं चरित्र चित्रण :

'गोदान' को घटना–चरित्र–सापेक्ष रचना कहा जा सकता है। इसके पात्र सजीव और विकासशील हैं। वे घटनाओं में जन्म भी लेते हैं और घटनाओं के सहज प्रवाह में अपने जीवन में परिवर्तन तथा विकास भी ले आते हैं। होरी की गाय प्राप्ति की साध भोला से अनायास भेंट होने पर जागृत होती है। वह अपनी प्रकृति के अनुरूप प्रयास करता रहता है, पर अपने स्वभाव तथा गुण के अनुरूप ही घटना को परिणति की ओर इसे आगे बढ़ाता है। इसी प्रकार सोना के विवाह की चिन्ता में होरी कर्ज का प्रबन्ध करना चाहता है। सोना अपने प्रयासों से होरी को इससे मुक्त कर देती है। फिर भी अपनी प्रकृति के अनुसार होरी कर्ज लेता है, और उसके परिणाम भी भुगतने पर बाध्य होता है। इससे यह स्पष्ट ही है कि पात्र केवल घटनाक्रम की अथवा लेखक के हाथ की कठपुतली मात्र नहीं है। उनका समुचित चारित्रिक स्वरूप निर्मित हुआ है और उसके सहज विकास को कहीं अवरूद्ध नहीं होने दिया गया है।

'गोदान' के सारे पात्र गतिशील हैं। गोबर, मातादीन, मालती, मेहता, धनिया और सिलिया, इन सबके चरित्रों में परिस्थितियों के अनुरूप परिवर्तन और विकास होता है। खन्ना का परिस्थितिजन्य परिवर्तन बहुत स्पष्ट है। होरी, धनिया, रायसाहब आदि के चरित्र उतने गतिशील न होने पर भी अपनी चरित्रगत विशेषताओं की संगति की दृष्टि से तथा परिस्थितियों के प्रति अपनी प्रतिक्रियाओं के अनुसार बहुत विश्वसनीय और सार्थक प्रतीत होते हैं। पात्र अपने स्वभाव और अपनी प्रकृति के अनुरूप ही परिस्थितियों के कारण विचलित हो जाते हैं अथवा प्रभावित होने पर भी अडिग बने रहते हैं। इस वैयक्तिक मनोवैज्ञानिक सत्य का पालन 'गोदान' के चरित्र–विन्यास में बहुत सार्थकता और सफलता के साथ सिद्ध हुआ है। पात्र चाहे दृढ़ चरित्र वाले हों, अपने परिवर्तनशील, वास्तविक जीवन में ऐसे लोग हमें मिलते ही रहते हैं। प्रेमचन्द द्वारा 'गोदान' के आयोजन में इन दोनों वर्गों के पात्रों का सजीव रूप ही चित्रित किया गया है, निर्जीव रूप नहीं। उनके अन्तस्तल में बाह्य परिस्थितियों की उचित प्रतिक्रिया होती है। क्रिया और प्रतिक्रिया जीवन का चिन्ह हैं यदि प्रतिकृत होने के बाद भी पात्र अपने मूल केन्द्र पर आ जाते हैं तो निर्जीव नहीं कहे जा सकते। हां प्रतिक्रिया का अभाव अवश्य निर्जीवता का चिन्ह होता है जिन पात्रों में पूर्ण परिवर्तन और विकास प्रदर्शित हुआ है, उसके लिए भी समुचित परिस्थिति और विश्वसनीय आधार की प्रस्तावना 'गोदान' के चरित्र–विन्यास की विशेषता है।

'गोदान' की पात्र–सृष्टि में वर्गीय चरित्रांकन का प्राधान्य है। अधिसंख्यक पात्र अपने वर्ग का प्रतिनिधित्व करते प्रतीत होते हैं पर वे अपना निजी व्यक्तित्व भी साथ लेकर ही क्रियाशील होते हैं, और यह 'गोदान' की सफलता और प्रभाव का एक अन्य कारण है। होरी सामान्य कृषक का प्रतिनिधि है। कृषक के सहज गुण–अवगुण, रुचि–प्रकृति, आशा–आकांक्षा और सबलता–दुर्बलता सब उसमें है। यह सब होने पर वह एक निजी व्यक्तित्व से उत्पन्न विशेष व्यक्ति है। होरी की आदर्शवादिता अथवा आदर्श का सत्याग्रह उसकी अपनी निजी विशेषता है, जो सामान्य किसान में उसी रूप उसी मात्रा में नहीं होगी। होरी की अपनी अकेली तथा निजी पहचान का यही तत्व आधार है। और यह 'गोदान' की सफलता का महत्वपूर्ण कारण है। दातादीन, झिंगुरीसिंह, मंगरू शाह और दुलारी सहुआइन सब गांव के महाजन हैं। किसान का शोषण अधिक से अधिक सूद लेना तथा किसी भी विधि से किसान का अधिक से अधिक शोषण इन सबकी वर्गगत प्रकृति है। पर इस एकता के बाद सब अपने–अपने निजी व्यक्तित्व से सम्पन्न रूप में चित्रित और विकसित हुए हैं। झिंगुरी सिंह जिस कठोरता के साथ कर्ज और ब्याज की वसूली करता है वैसे दातादीन नहीं करता। दातादीन महाजन होने के साथ–साथ पुरोहित भी हैं। उसका एक अन्य सम्बन्ध–सूत्र भी हर किसान व उसके परिवार के साथ है। इसलिए वह महीनों–वर्षों प्रतीक्षा भी कर लेता है। और कुछ कोमल भी है। मंगरू शाह की अपनी निजी प्रकृति है वह भी क्रूर नहीं है। वह होरी पर मुकदमा नहीं करना चाहता। वह तो पटेश्वरी के उकसाने पर ही ऐसा करता है। दुलारी अपनी वैयक्तिक विशेषताओं के अनुरूप व्यवहार करती है। होरी की खुशामद और अपनी प्रशंसा से अभिभूत होकर वह होरी की सहायता के लिए महाजन की सामान्य सीमाओं के लांघने को भी उद्यत हो जाती है। इस प्रकार इन सब महाजनों में वर्गगत अभिन्नता भी है और निजी भिन्नता भी है। भिन्नता और अभिन्नता का यह सामंजस्य ही चरित्र–चित्रण को स्वाभाविक, सजीव और प्रभावपूर्ण बनाने में सहयोगी होता है।

रायसाहब अपने जमींदार वर्ग के प्रतिनिधि हैं उस वर्ग की सब विशेषताएं और त्रुटियां इनके चरित्र में हैं। पर इसके बाद वह विशेष है, अपने निजी व्यक्तित्व से सम्पन्न है, और विलासी नहीं है। आधुनिक विचार–चिन्तन और ज्ञान से सम्पन्न है। अपनी जमींदारी व्यवस्था के दोषों और बुराईयों से अवगत है और उनका उल्लेख भी करते हैं। साहित्य कला की सुरुचियों से सम्पन्न है। वह राष्ट्रीय विचारों से भी प्रभावित है, पर साथ ही अधिकारी वर्ग के साथ अच्छे सम्बन्ध भी बनाए रखना चाहते हैं। वह किसानों के प्रति सहानुभूति भी रखते हैं, पर साथ ही अपने वर्गगत चरित्र तथा व्यवस्था की बाध्यता में शोषण के सहारे अपना वैभव और ऐश्वर्य भी बनाए रखते हैं।

आज के जीवन में शिक्षित वर्ग के डाक्टर, वकील, अध्यापक, सम्पादक, पूंजीपति, मिल–मालिक, समाज सुधारक, छात्र आदि सबका महत्व है। 'गोदान' में इन सब वर्गों के पात्रों का संयोजन हुआ है। मेहता में प्राध्यापक की सामान्य वर्गगत विशेषताएं हैं, पर जैसा उनका चरित्र विशिष्ट और निजी है वैसे सब प्राध्यापक तो नहीं होते। मालती का प्रथम परिचय अवश्य एक सुशिक्षित तथा सभा–सोसायटी में उठने–बैठने वाली सामान्य महिलाओं के वर्ग के प्रतिनिधि के रूप में होता है पर उसका चरित्रांकन तथा चरित्र–विकास जिस सूक्ष्मता व तर्कसंगति के साथ हुआ है, उसके वह निजी व्यक्तित्व से सम्पर्क और विशेष बन गई है। तंखा में वकीलों तथा इन्श्योरेंस एजेंट–वर्ग का कलुष पक्ष अधिक प्रकट हुआ है, अतः वह सारे वर्ग का प्रतिनिधि नहीं है। ओंकारनाथ ऐसे सम्पादक के रूप में चित्रित हुआ है; जो अपनी विशेष परिस्थिति से अनुचित लाभ उठाने की प्रवृति से सम्पन्न हैं। परन्तु उसकी आचार–निष्ठा, खान–पान में विवेक बुद्धि निडरता, दोनों के प्रति सहानुभूति, सरकार से टक्कर लेने की प्रवृति आदि उसे वर्ग की सामान्य प्रकृति से

ऊपर उठाकर विशेष बना देती है। इसी प्रकार मिर्जा खुर्शीद व्यवसाय से तो व्यपारी–दुकानदार हैं, और उसकी वर्गगत प्रकृति होना स्वाभाविक है, पर उसकी विनोदप्रियता, सनकीपन, बेफिक्री, मस्तानापन सामान्य व्यापारी से उसे अलग कर देता है। खन्ना मिल मालिक पूंजीपति है, पर अपने सामान्य वर्गीय चरित्र की अपेक्षा बहुत अलग है। परिवर्तन की ये दिशाएं ही उसे व्यक्ति–विशेष बना देती हैं। इसी प्रकार उसकी पत्नी भी सामान्य गृह–नारी पात्र न होकर अपने निजी व्यक्तित्व से सम्पन्न है। यह निसंकोच कहा जा सकता है कि 'गोदान' के वर्गगत पात्र भी अपने व्यवसाय की सामान्य अच्छाई या बुराई से सम्पन्न होने पर भी उनमें अलग तरह का परिस्थितिजन्य चारित्रिक विकास दिखाने का प्रेमचन्द ने प्रयास किया है।

प्रेमचन्द 'गोदान' में एक प्राणयुक्त, हलचल भरे संसार का निर्माण करते हैं। इस उपन्यास की दुनिया दो–चार पात्रों का सीमित संसार नहीं है इसमें नर–नारियों का जमघट है, निर्धन शोषित–पीड़ित किसान हैं, मजदूर हैं। महाजन, जमींदार, पूंजीपति और उन व्यवसायों के एजेंट और दलाल हैं, शासक और कर्मचारी हैं। छोटे व्यवसाय करने वाले गवाले, बंसोड़ तथा ग्राम व नगर के ऐसे ही अन्य वर्गों के प्रतिनिधि हैं। यह जगत् बहुत वास्तविक और विश्वसनीय है। सामान्य जीवन के पात्रों की तरह ही ये भी सुखी और दुःखी होते हैं। इनमें भी परिस्थितिजन्य कमजोरियां आती हैं। वे भी समय पर उच्च आदर्श, त्याग और बलिदान की भावनाओं को व्यावहारिक परिणति देते हैं। ये पात्र आदर्श भी हैं और यथार्थ भी। आदर्श पात्रों में भी क्षणिक दुर्बलताएं या स्खलन दिखाए गए हैं और यथार्थ पात्रों के भी श्रेष्ठ गुणों का उद्घाटन हुआ है। चरित्र अपनी वर्गगत अथवा प्रासांगिक बात भी करते हैं तो यथा अवसर लेखक की इच्छा–आकांक्षा तथा संकल्पों की भी अभिव्यक्ति देते है। चरित्र विकास की दोनों पद्धतियों का सफल प्रयोग हुआ है। पात्र अपने क्रियाकलाप, व्यवहार और कथोपकथन द्वारा अपना परिचय देते हैं तो लेखक स्वयं भी कथा–उपस्थापक के रूप में पात्र परिचय और चरित्र–विकास करता चलता है। तुलनात्मक विश्लेषण द्वारा भी चरित्र–विकास हुआ है इस प्रकार पात्र–सृजन एवं चरित्र–चित्रण की दृष्टि से 'गोदान' को एक बेहद सफल रचना कहा जा सकता है।

संवाद

पुरानी कहानियों में कथोपकथन अनिवार्य नहीं रहा है। उपन्यास में यथार्थ वातावरण में सृजन नाटकीय प्रभाव तथा चरित्र–विश्लेषण के लिए कथोपकथन का बहुत महत्व स्वीकार किया जाता है और इसे अनिवार्य तत्वों में परिगणित किया जाता है। कथोपकथन में मूल कथानक अपनी मानसिक आंखों के सामने चलता, आगे बढ़ता हुआ अनुभव किया जा सकता है। कथोपकथन से पात्रों की आज्ञाओं, आकांक्षाओं, प्रकृतियों, रूचियों, उपांगों और अनुभूतियों का भी अधिक सही परिचय प्राप्त होता है और इसका प्रभाव भी अधिक पड़ता है। कथोपकथन की घटना और पात्र के परस्पर आदान–प्रदान का उद्घटक एवं प्रकाशक माना जाता है। इससे लेखक को स्वयं चरित्र और पाठक के बीच न आकर सहज रूप कथा–प्रवाह तथा उसकी अविच्छिन्नता बनाए रखने में सहयोग मिलता है। विश्लेषनात्मक और वर्णनात्मक उपन्यासों में भी कथोपकथन का महत्व कम नहीं होता।

कथोपकथन कथा का अभिन्न अंग बन जाना चाहिए। यदि यह तत्व अपनी स्वतन्त्र सत्ता उपन्यास में बनाने लगे तो यह उलटा रचना के लिए घातक हो जाएगा। यह प्रासांगिक भी होना चाहिए और चरित्र–विकास तथा घटना–विकास में इसका सक्रिय सहयोग होना चाहिए। यह स्वाभाविक, सरल, सजीव तथा पात्र की अपनी स्थिति के अनुकूल होना चाहिए। पात्र की आयु, वर्ग, शिक्षा–दीक्षा, ज्ञान, प्रकृति तथा अवसर या प्रसंग की मांग के अनुरूप ही कथोपकथन उपयुक्त एवं प्रभावपूर्ण गुण प्राप्त करते हैं।

'गोदान' में कथोपकथन का अपना विशेष महत्व है। 'गोदान' के कथोपकथन कथा को आगे बढ़ाने में उन्हें स्पष्ट करने में सहयोगी हैं। वे देश और काल के व्यवधान को भरने में सहायक हैं। इनसे कथा के अगले सूत्रों का संकेत भी प्राप्त होता है, और भावी के सम्बन्ध में जिज्ञासा तथा कौतुहल का भाव जागृत होता है। कथोपकथन द्वारा चरित्रों के स्वभाव, रूचि, क्षमता और सीमा का पता चलता है। संवाद के साथ सूक्ष्मता से लेखक द्वारा स्वयं उकेरी गई पात्रों की भाव–भंगिमा और आंगिक मुद्रा इसमें और भी सहायक होती है और जब इसके बाद लेखक स्वयं अपनी विवेचनात्मक तथा निर्णायक टिप्पणी देता है तो चरित्र–चित्रण में कोई कमी नहीं रह जाती। संवादों से लेखक अपनी मान्यताओं तथा सिद्धान्तों के प्रतिपादन का कार्य भी सम्पन्न करता है।

'गोदान' के कथोपकथन चुस्त, समयानुकूल, पात्रानुकूल, संक्षिप्त, सजीव और सरस है। लम्बे संवाद अथवा एकालापीय कोटि के भाषण प्रायः लेखक ने अपने सिद्धान्तों को स्पष्ट करने के लिए ही आयोजित किए हैं। होरी और उसकी पत्नी के संवाद में गांव की अवस्था, दम्पति के परस्पर सम्बन्ध और तत्कालीन सामान्य स्थिति नाटकीय विधि से उजागर होती है। होली के अवसर पर गोबर तथा उसके मित्रों के संवाद में व्यंग्य, कटाक्ष, हास और आक्रोश की अभिव्यक्ति बहुत सजीव रूप में हुई है। समग्र रूप में कथोपकथन 'गोदान' की बहुत बड़ी शक्ति तथा सामर्थ्य के सूचक हैं। इनकी भाषा सहज और स्वाभाविक तथा इनका मुहावरा सजीव तथा परिस्थिति एवं पात्र के उपयुक्त है। क्लिष्टता का पूर्ण अभाव है और पात्रानुकूलता का गुण सर्वत्र विद्यमान है।

देश–काल और वातावरण :–

देश अथवा क्षेत्र उपन्यास का आधार है, भूमि है। कालविशेष उसके क्षेत्र–परिवेश का निर्माण करता है। इन दोनों के अभाव में पात्र आधारहीन, देश–काल तथा उनका विशेष वातावरण ही पात्रों को खड़े होने का, अपनी पहचान का, समग्र जातीय इतिहास में स्थान–विशेष में उन्हें स्थापित करने का अवसर प्रदान करता है उनके नाम, उनके काम, उनके शब्द देश–काल में संयुक्त होने पर ही अर्थ प्राप्त करते हैं। इसी से उनकी घटनाओं में स्वाभाविकता, विश्वसनीयता तथा सजीवता के तत्वों का समावेश होता है। बाहरी प्राकृतिक परिवेश, चतुर्दिक जड़–प्रकृति के सर्वांग को समाविष्ट करता है। इसमें नगर, उसकी गली–मुहल्ले, बाजार, राजमार्ग, ग्राम के खेत, खलिहान झोंपड़ी, नदी, वन, झरने, पर्वत, शिखर, बाग–बगीचे अर्थात् वह समग्र भौतिक परिवेश जिसमें मानव रहता जीता या रह सकता है, शामिल हैं। पर यह स्मरणीय हैं कि वातावरण केवल आधार या साधन मात्र है। यह स्वयं में साध्य नहीं है। अतः जो उपन्यासकार मग्न होकर प्रकृति–चित्रण में ही उलझ जाते हैं वे शीघ्र ही पाठक को अपनी रचना से प्रभावित करने के भागी बनते हैं।

सामाजिक वातावरण के अन्तर्गत सामाजिक परिस्थितियों को ग्रहण किया जाता है, जिनका प्रभाव पात्रों के चिन्तन, व्यवहार तथा भावों के ऊपर होता है। इन परिस्थितियों में राजनीतिक, सामाजिक, नैतिक, धार्मिक, आर्थिक आदि वे सब स्थितियां शामिल हैं जिनके प्रभावान्तर्गत पात्र जीते, कार्य करते और प्रतिकृत होते हैं। वातावरण–निर्माण की दो विधियों का उपन्यासकार प्रयोग करते हैं। एक विधि के अनुसार व्यापक जगत् के समग्र परिवेश को बहुत विस्तार और सूक्ष्मता के साथ चित्रित करके उपन्यास को एक पूरे जगत, जगत् के देश–काल में बद्ध प्रखण्ड के रूप में उजागर किया जाता है। दूसरी विधि के अनुसार सीमित पात्रों के मनोजगत् और क्रिया–व्यापार के सूक्ष्म चित्रण द्वारा उनके आन्तरिक जगत् के उद्घाटन में केवल उनके निकट परिवेश को ही चित्रण का आधार बनाया जाता है।

'गोदान' में सर्वांग तो नहीं, पर बहुमुखी परिवेश चित्रण अवश्य प्राप्त होता है। प्रेमचन्द के उपन्यासों की पूरी श्रृंखला को लिया जाए तो समग्रत या सर्वांगीणता के साथ उनका युग और

परिवेश सार्थक हुआ देखा जा सकता है। पर उनका अकेला–अकेला उपन्यास इस दृष्टि से बहुमुखी होने पर भी काफी सीमित है। युग का सीमित नगरीय और ग्रामीण वातावरण 'गोदान' में पूर्ण सजीवता और विश्वसनीयता के साथ सार्थक हुआ है। युगीन भावनाएं इसमें व्यक्त हुई हैं। इसमें राष्ट्रीय चेतना की अभिव्यक्ति हुई है। देश की पराधीनता, हीनता, निर्धनता, निरक्षरता, रुढ़ि, शोषण आदि से उद्भूत सामाजिक परिस्थितियों और मानसिक स्थितियों का इसमें चित्रण हुआ है। पर ये स्थितियां और परिस्थितियां समग्र भारत और भारतीय समाज के हर वर्ग से सम्बद्ध न होकर एक सीमित क्षेत्र से सम्बद्ध हैं।

'गोदान' में जड़ प्रकृति है, पर बहुत प्रमुख नहीं है। जड़ प्रकृति के हल्के आधार के बाद प्रेमचन्द प्रायः सजीव मानव प्रकृति, मानव के क्रियाकलाप और उसके सामाजिक उपक्रमों में ही अधिक रुचि लेते हैं। आलम्बन, उद्दीपन, प्रतीक तथा मानवीय प्रकृति की सकारात्मक अथवा नकारात्मक प्रतिकृति आदि अनेक रूपों में प्रकृति–चित्रण सम्भव है। पर कुल मिलाकर 'गोदान' में इन पद्धतियों का सीमित प्रयोग ही हुआ है।

सामाजिक परिवेश में नगर और ग्राम के विभिन्न वर्गों की परिवेश–रचना बहुत सूक्ष्मता के साथ हुई है। इसमें सामाजिक, प्रथा, रीति–रिवाज, बिरादरी के सद्असद् प्रभाव, विवाह और वैवाहिक जीवन सम्बन्धी स्थितियां नैतिक व्यवहार आदि सब शामिल हैं। आर्थिक स्थितियों के निर्माण में कर, ब्याज, दण्ड, कुर्की, नीलामी, बेदखली आदि शोषण की विविध स्थितियों द्वारा ग्राम समाज के चित्रण को तथा हड़ताल, तालाबन्दी आदि द्वारा नगर के मजदूर के शोषण को ठोस एवं विश्वसनीय आधार प्रदान किया गया है।

राजनीतिक परिस्थितियों का तो उल्लेख मात्र है, पर धार्मिक एवं मतवादी स्थितियों में ग्राम तथा ग्रामीण जनता की जड़ता एवं दातादीन–परिवार के माध्यम से रूढ़ि, पाखण्ड और धर्म के शोषक रूप में सशक्त अभिव्यक्ति प्राप्त हुई है। सारांश रूप में यह कहा जा सकता है कि 'गोदान' में अपने युग की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और प्रभाव–क्षमता में वृद्धि हुई है और लेखक के आर्थिक शोषण के मुख्य लक्ष्य को पूरी तरह उद्घाटित करने में भरपूर सफलता प्राप्त हुई है।

समाज और व्यक्ति की अन्तः क्रिया में ही व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास होता है। समाज में हम अनुभव, मूल्य, दृष्टि, सद् और असद् का विवेक प्राप्त करते हैं। सजग–सचेत व्यक्ति का व्यक्तित्व अपने विवेक के आधार पर समाज में बहुत कुछ अच्छा देखकर उसे पसन्द करता है और उसे अपनी ओर अधिक अभिवृद्धिशील देखना चाहता है। वह समाज के बहुत कुछ को गला–सड़ा, रूढ़िवादी, घटिया और परित्याज्य मानता है और उसके निराकरण में वह प्रयासरत होता है। इस दृष्टि से साहित्यकार का महत्व अधिक है। उसके पास रचना का माध्यम होता है, जिसके द्वारा वह अपने विचार को समाज के बड़े वर्ग तक पहुंचा सकता है। वैसे तो हर कला–रूप और साहित्य–रूप में लेखक के लिए अपने विचार और उद्देश्य को प्रस्थापित करने का अवसर विद्यमान होता है, पर कथा–साहित्य में यह कार्य अधिक स्पष्टता, अधिक पूर्णता और अधिक विश्वसनीयता के साथ सम्पन्न हो सकता है। इसमें भी कहानी में जीवन खण्ड मात्रा होता है जबकि उपन्यास में तो पूर्ण जीवन ही समग्रता में अभिव्यक्त होता है। इसलिए उपन्यास को जीवन की व्याख्या या आलोचना कहा गया है। यही कारण है कि जीवन व्याख्या को अथवा जीवन सम्बन्धी विचार तथा उद्देश्य की प्रस्थापना को उपन्यास का महत्वपूर्ण तत्व स्वीकार किया जाता है। प्रेमचन्द की जीवन–अनुभूतियों उनकी सब रचनाओं में बहुत सार्थकता के साथ अभिव्यक्त हुई है। 'गोदान' में भी वह अपनी इच्छा, आकांक्षा और अपेक्षा को कथा व पात्रों के संघात से पूर्ण समन्वित रूप में व्यक्त

करते हैं। वह जीवन को जिस रूप में देखते हैं और जिस रूप में उसे देखना चाहते हैं वह सारा रूप उसकी रचना में उद्घाटित हुआ है।

प्रेमचन्द बहिर्मुखी, समाजोन्मुखी, कलाकार थे। वह व्यक्ति–मन के गहन, गुह्य रहस्यों के उद्घाटन के बजाय मानव समाज तथा उससमाज की अन्तः क्रियाओं में घटित और रचित होने वाले जीवन को अधिक महत्व देते हैं। 'गोदान' में भी उसके इसी व्यक्तित्व का प्रतिफलन हुआ है। प्रेमचन्द व्यक्तित्व को उपेक्षणीय तो नहीं मानते थे, पर उसकी सार्थक्ता वह समाज के सन्दर्भ में ही स्वीकार करते थे। व्यक्ति की निजी इच्छा, चेतना और अहं के तत्व होते हैं। सामाजिक दबावों में वे विशेष रूपों और प्रकारों में व्यक्त होता है, और यही मानव के सामाजिक और वैयक्तिक जीवन का सत्य है। विशेष बात यह है कि कोई भी कलाकार इन जीवन सत्यों को कला–सृजन में इस रूप में गुम्फित करके अभिव्यक्त करता है कि जो उपदेश, नैतिक विधि–निषेध तथा संहिता बनकर प्रस्तुत नहीं होते। सामान्य जीवन जीते पात्रों के सहज क्रिया–व्यवहार से नाटकीय विधि से इन जीवन–सत्यों की स्थापना ही श्रेष्ठ कलाकार की विशेषता होती है।

प्रेमचन्द इसी वर्ग के कलाकार थे। 'गोदान' में वह अपने जीवन सत्यों को इसी रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास करते हैं। वह अपने पात्रों में स्वाभाविक रूप से उन गुणों का विकास करते हैं जिनकी समाज–हित में वह कामना करते हैं। होरी, रायसाहब, खन्ना, मेहता, मातादीन, धनिया, झुनिया, सिलिया आदि सब प्रमुख पात्रों में सत और असत प्रवृतियां विद्यमान हैं। इनमें कोई भी पूर्ण मानव नहीं है। पर प्रेमचन्द उन सब पात्रों में सामाजिक घात–प्रतिघात में सद्–प्रवृतियों के विकास की दिशा को सांकेतिक करके जीवनादर्श सम्बन्धी अपने लक्ष्य को परोक्ष रूप में सिद्ध करने का प्रयास करते हैं। वह ग्रामीण जीवन के विस्तृत विवरण द्वारा जटिल आर्थिक अवस्था को पाठक के सामने प्रस्तुत करके एतत्सम्बन्धी सद्भाव, संवेदना तथा सहानुभूति जागृत करने के महत लक्ष्य को सिद्ध करते हैं। होरी का समस्त जीवन संघर्ष, उसके सतत् शोषण और अन्त में प्रस्तावित करते हुए कहते हैं – "नहीं, अपने को मिटाने से काम नहीं चलेगा। नारी को समाज के कल्याण के लिए अपने अधिकारों की रक्षा करनी पड़ेगी, उसी तरह जैसे उन किसानों को अपनी रक्षा के लिए उस देवत्व का कुछ त्याग करना होगा।" महाजन, पूंजीपति और अन्य शोषक वर्ग के विस्तृत चित्रण द्वारा भी वह किसान के शोषण के प्रति जागरूकता पैदा करना चाहते थे। अपनी दुर्दशा के लिए किसान भी कम जिम्मेदार नहीं हैं। उनकी अशिक्षा, रूढ़ि, अंधविश्वास, जड़ता, जमीन के प्रति अतिमोह आदि तत्वों का उद्घाटन भी इसी सन्दर्भ में हुआ है। नगर के शिक्षित वर्ग के द्वारा सभा–सोसायटी, विधान सभाओं में दलितों–शोषितों के प्रति होने वाली भाषणबाजी और व्यवहार में या तो अकर्मण्यता अथवा शोषण के ही एक अंग की भूमिका उन्हें असह्य है। उसे भी अपने कौशल से वह उद्घाटित करके उसके प्रति अपनी अनास्था व्यक्त करते हैं। गांधीवादी नीति का भी 'गोदान' में सर्वत्र समर्थन नहीं है, पर उनके गांधीवादी सुधारों की अनुगूंज स्थान–स्थान पर प्राप्त है। राष्ट्रीय आंदोलनों की सफलता के लिए वह नेताओं की सच्चरित्रता और निष्ठा को अवश्य रेखांकित करते हैं। मेहता के चरित्र का प्रभाव खन्ना जैसे पूंजीपति मिल मालिक पर पड़ता है और अपने मजदूर वर्ग के प्रति उसका भाव बदल जाता है। उसी प्रकार किताबी मार्कसवादियों के समान वह लाल–क्रांति का नारा लगाते भी कहीं दिखाई नहीं देते, जबकि समाज की अवस्था को आमूल बदलने की उनकी आकांक्षा सर्वत्र व्यक्त हुई है।

हिन्दुओं की दान–प्रथा की अवमानना और विश्वबन्धुत्व, विश्वप्रेम, सेवा त्याग, आत्म बलिदान, संयम आदि मानवीय गुणों की प्रशंसा का विविध घटनाओं, स्थितियों और पात्रों के चरित्र–व्यवहार द्वारा समर्थन हुआ है। पीड़ा–विहीन और शोषण विहीन समाज का निर्माण प्रेमचन्द का लक्ष्य रहा

है। 'गोदान' की घटना, पात्र–विन्यास, संवाद–सूक्ति और अन्य हर प्रकार के आयोजन द्वारा प्रत्यक्ष रूप में, परन्तु कलात्मक विधि से वह इन्हें सिद्ध करने का सतत प्रयास करते हैं।

'गोदान' की भाषा एवं शैली की विशिष्टता :–

भाषा मानवीय भाव एवं विचार के जागरण, सम्प्रेषण और ग्रहण करने की सशक्त माध्यम है। काल–विशेष में एक समाज या जाति भाषा विशेष के माध्यम से आत्मभिव्यक्ति करती है। भाषा एक सारे समाज की सांझी सम्पति होने पर भी व्यक्ति–व्यक्ति में प्रयोग की क्षमता में भेद होता है। इसी प्रकार हर व्यक्ति एक समाज में रहते हुए अपनी सम्पूर्ण कार्य–प्रणाली, व्यवहार, ज्ञान, मूल्य–अवस्था और जीवन–दृष्टि उस समाज से ही ग्रहण करता है। फिर भी उसकी जीवन–शैली हर दूसरे व्यक्ति से भिन्न होती है – भाषा–प्रयोग की भी अपनी एक निजी पद्धति है, और इसे व्यक्ति की शैली कहा जाता है। यह विशिष्ट, एकदम निजी और वैयक्तिक होने के कारण व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का प्रतिफल होती है। 'गोदान' की भाषा और शैली पर विचार वस्तुतः लेखक के रूप में प्रेमचन्द के भाषा–बोध और उनकी अभिव्यंजना प्रणाली का ही विवेचन है।

उपन्यास में वर्णनात्मक और विवरणात्मक विधि में घटनाक्रम को आगे बढ़ाया जाता है। स्थिति विशेष, घटना अथवा किसी वैचारिक स्थापना के लिए विश्लेषण का सहारा भी लिया जा सकता है। पर सामान्यतः उपन्यास को कथा–उपस्थापन, उत्तम पुरुष शैली में आत्मकथा के रूप में 'गोदान' में प्रथम पद्धति का ही प्रेमचन्द अधिकांशतः प्रयोग करते हैं।

राग, बुद्धि, कल्पना और भाषा ये शैली के निर्धारक तत्व हैं। राग तत्व से रचना में प्रभाव क्षमता, सजीवता, मर्मस्पर्शिता आदि के गुणों का समावेश होता है। बुद्धि तत्व व्यवस्था, विश्वसनीयता, क्रम, संगीत आदि का कारण होता है। 'गोदान' में शैली के ये सब गुण अपने बहुत विकसित और पुष्ट रूप से प्राप्त हैं। 'गोदान' एक भावपूर्ण संवेदना–सम्पन्न रचना है। सभी पात्रों और परिस्थितियों के साथ पाठक का भावनात्मक, संवेदनापूर्ण, निजी सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। उसकी परिस्थितियां पाठक को रागात्मक स्वर पर उद्वेलित करती हैं प्रसंग होरी की निर्धनता या शोषण का हो या झुनिया–गोबर के प्रणयाकर्षण का, अथवा मातादीन–सिलिया के सम्बन्धों की सामाजिक संश्लिष्टता का 'गोदान' में इन्हें केवल ज्ञान या सूचना के स्वर तक सीमित न रखकर संवेदना के स्तर पर अनुभूत करवाया गया है। तर्क, विवेक, विश्वसनीयता, क्रम और व्यवस्था तो 'गोदान' की विशेषताएं हैं। 'गोदान' का वैचारिक आधार इतना सुदृढ़ है कि कहीं किसी भी अवस्था में शंका, अविश्वास आदि का प्रश्न ही नहीं आता। प्रेमचन्द कल्पना का भरपूर उपयोग करता है। प्राकृतिक कल्पना में प्रेमचन्द का मन अधिक नहीं रमा है। पर मानव प्रकृति, मानव के अन्तर्गत, उसकी समस्या, उसकी स्थिति और उसके निकट परिवेश का सम्पूर्ण कल्पनात्मक विधान 'गोदान' की विशेषता है। जहां तक भाषा का प्रश्न है, प्रेमचन्द को आधुनिक हिन्दी गद्य के निर्माताओं में उच्च स्थान प्राप्त है। हिन्दी गद्य को चुस्ती–दुरुस्ती, व्यावहारिकता, सहायता, स्पष्टता, शुद्धि, निश्चलता प्रेमचन्द प्रदान करते हैं। वह आने वाले समय के लिए हिन्दी गद्य का मानक रूप तथा गद्यकारों के लिए कसौटी के रूप में स्वीकृत हुई है। इस प्रकार 'गोदान' को सब सन्दर्भों में बहुत सफल रचना कहा जा सकता है।

'गोदान' की भाषा में विशेष रूप व्यापार–सूचक शब्दों के प्रयोग और शब्द–शक्तियों के उपयोग से चित्रमयता, मर्मस्पर्शिता आदि गुणों का समावेश हो गया है। होरी घर में दूध–घी न होने को "दूध–घी अंजन लगाने तक तो मिलता नहीं"–कह कर सूचित करता है। 'गोदान' में प्रेमचन्द लक्षणा और व्यंजना शब्द शक्तियों का भरपूर और सार्थक प्रयोग करते हैं। गोबर झुनिया के प्रेम प्रसंग में होरी की असावधानी का चित्राण वह बहुत आलंकारिक विधि से करते हैं।

1.4.3 सारांश :

'गोदान' में प्रेमचन्द साहित्य और सरल ग्रामीण–भाषा के दोनों रूपों का प्रयोग करते हैं। नगर के पात्रों की भाषा प्रायः साहित्यिक है। मिर्ज़ा खुर्शीद के अतिरिक्त शेष सब नागरिक पात्रों की भाषा में तत्सम शब्दों का प्रयोग हुआ है। ग्रामीण पात्र अपनी सरल तथा सहज देहाती भाषा का उपयोग करते हैं। उर्दू फ़ारसी के प्रचलित शब्द भी प्रयुक्त हुए हैं पर ऐसे शब्द कहीं भी आरोपित न होकर चलती भाषा का अंग बन कर आए हैं। समानार्थक शब्दों का संयुक्त प्रयोग भी भाषा में चुस्ती लाने का कारण बनता है। बेल–बधिए, पोथी–पत्रा बरतन–भांडे, नेमी–धरमी, दान–दहेज, दांव–घात, ठीक–ठाक आदि 'गोदान' में प्रयुक्त ऐसे युगलों के कुछ उदाहरण हैं। लोकोक्ति तथा मुहावरे भाषा में अतिरिक्त सहजता, चलतापन और चुस्ती का कारण बनते हैं। श्री बलदेव कृष्ण के शब्दों में ''प्रेमचन्द की भाषा में सरलता है, स्वच्छता है। वस्तु वर्णन की भावाभिव्यंजना में उनकी क्षमता निर्विवाद है। उनकी भाषा मनोवेगों को तरंगित कर सकती है। चरित्र का विश्लेषण कर सकती है, विचारों का, नीति का संकेत कर सकती है। आज अपने देश में भाषा का किसी पद्धति को यदि व्यावहारोपयोगी कहा जा सकता है तो वह यही 'गोदान' की भाषा है। इस भाषा के सर्वप्रिय होने में, सर्वग्राह्य होने में कोई संदेह नहीं है। देश की, संस्कृति की, दर्शन विधान की, मानव–मन की प्रत्येक भावना का इस भाषा में प्रकाशन हो सकता है। यह सब प्रकार से सशक्त है, सजीव है, अनुकर्णीय और उपादेय है।''

पाठ संख्या–1.5

आदर्शवाद, यथार्थवाद और प्रमुख समस्याएं

रूपरेखा

1.5.0 उद्देश्य

1.5.1 प्रस्तावना

1.5.2 यथार्थवाद

1.5.3 आदर्शवाद : मुख्य तत्व

1.5.4 गांधीवाद और 'गोदान'

1.5.5 'गोदान'–ग्राम–जीवन तथा नगर–जीवन का दस्तावेज़–प्रमुख समस्याएं

1.5.6 सारांश

1.5.0 उद्देश्य :

इस पाठ के अन्तर्गत 'गोदान' की समस्याओं पर प्रकाष डालेंगे। प्रेमचन्द स्वयं अपनी रचनाओं में आदर्शोन्मुखी यथार्थ की प्रस्थापना अपना लक्ष्य मानते हैं। वह केवल आदर्श–स्थापना के मोह में अपने कथा–साहित्य को प्रचार मात्र तक सीमित करना नहीं चाहते। दूसरी ओर समाज–हित और व्यक्ति हित उनके लिए सर्वोपरि है। इसलिए वह ऐसे किसी यथार्थ के प्रति भी आस्थाषील नहीं है जो सत्य और सम्भव तो हो पर कल्याणकारी नहीं। प्रेमचन्द का युग राष्ट्रीय आंदोलनों के विकास और प्रचार का काल था। स्वतन्त्रता के लिए विविध–मुखी आंदोलनों के साथ–साथ समाज सुधार सम्बन्धी विभिन्न प्रयास देश के कोने–कोने में हो रहे थे। स्वतन्त्रता संग्राम और समाज सुधार में गांधी जी की भूमिका अतुलनीय रही है। गांधी जी की समग्र दृष्टि आदर्शोन्मुखी यथार्थ–केन्द्रित रही। उनके सम्पूर्ण जीवन तथा कार्यों को आदर्शोन्मुखी–यथार्थवाद का व्यावहारिक तथा क्रिया–पक्ष कहा जा सकता है। इस पाठ के प्रथम भाग में यथार्थवाद, आदर्शवाद तथा गांधीवाद के सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य में प्रेमचन्द के योगदान के विवेचन का प्रयास हो रहा है।

1.5.1 प्रस्तावना :

'गोदान' में अपने समकालीन ग्राम जीवन का सर्वांग चित्राण, उस जीवन के गुण दोषों, सबलताओं, दुर्बलताओं, कृष्ण और धवल पक्षों सहित हुआ है। इसी लिए 'गोदान' को भारतीय अथवा हिन्दी भू–भाग के ग्राम जीवन का महाकाव्य भी कहा गया है। ग्राम जीवन को पूर्णता देने के लिए ही सशक्त नगर जीवन का भी अपने अंगों–उपांगों और वैविध्य के साथ संयोजन किया गया है। इस प्रकार 'गोदान' को नगर तथा ग्राम जीवन का एक सुसंयोजित दस्तावेज भी कहा गया है। इस विचार का विश्लेषण और मूल्यांकन इस पाठ के दूसरे भाग में हुआ है। अन्तिम तथा तीसरे भाग में

'गोदान' में उल्लिखित विभिन्न सामाजिक, आर्थिक और नैतिक समस्याओं को उनके कार्य–कारण संदर्भों में विश्लेषण को आधार बनाकर एतत्सम्बन्धी प्रेमचन्द की दृष्टि से रेखाकंन का प्रयास हुआ है।

1.5.2 यथार्थवाद :

यह साहित्य की एक विशेष चिन्तन पद्धति है। जिसके अनुसार कलाकार से अपनी कलाकृति में यथार्थ जीवन के अंकन की अपेक्षा होती है। धारणा के स्तर पर इसे आदर्शवाद की विलोम स्थिति माना जाता है, पर यह बहुत सही धारणा नहीं है। वास्तव में अयथार्थ का कोई भी रूप मानव जीवन में स्वीकार्य ही नहीं हो सकता। आदर्श भी जब तक यथार्थ की भूमि पर स्थापित नहीं होगा, वह कपोल–कल्पना मात्रा रहेगा, और अविश्वसनीय होगा। इसलिए आदर्श को भी वस्तुतः उर्ध्वमुखी, उच्च लक्ष्य से सम्पन्न तथा कल्याणकारी यथार्थ कहा जा सकता है। वस्तुस्थिति यह रही है कि यथार्थवाद का अर्थ अपनी अत्याधिक सीमाओं में जीवन की सारी परिस्थितियों के प्रति ईमानदारी का दावा करते हुए प्रायः सदा मानव की हीनताओं, कुरूपताओं, दोषों, अपूर्णताओं तथा विद्वेषताओं का चित्रण माना जाता रहा। यह जीवन के सुन्दर अंग को छोड़कर प्रायः असुन्दर के अंकन के प्रति आग्रहशील रहा है।

सुधार के लक्ष्य को लेकर लिखे गए साहित्य का यथार्थवाद सर्वाधिक शक्तिशाली शस्त्र हो सकता है। कल्पित आदर्श पर पाठक की आस्था और विश्वास नहीं बन पाता है, जबकि किसी भी सामाजिक स्थिति के प्रति विद्रोह का भाव पैदा करने के लिए साहित्यकार द्वारा उसका यथार्थ चित्रण सार्थक प्रभाव पैदा करता है जिसके बिना किसी प्रकार का सुधार, परिवर्तन या क्रांति सम्भव ही नहीं है। आधुनिक युग में मार्क्स के बाह्य भौतिक जगत् सम्बन्धी तथा फ्रायड के आन्तरिक मनःजगत सम्बन्धी सिद्धांतों द्वारा साहित्य में यथार्थ–प्रतिपादन को बहुत बल मिला। प्रगतिवादी तथा मनोविश्लेषणपूर्ण धारा के समग्र लेखन को यथार्थ प्रतिपादन के बहुत आग्रही रूप में देखा जा सकता है।

यथार्थवादः मुख्य तत्व : अतीत के स्थान पर अपने वर्तमान समसामयिक परिवेश तथा परिस्थितियों को यथार्थवादी अपने चिन्तन तथा अनुभूति का आधार बनाता है। यथार्थ की मांग पर वह अतीत की परम्पराओं और मान्यताओं के उल्लंघन के लिए तैयार रहता है। वह गले अतीत पर झूठा मुलम्मा चढ़ाने या कल्पित महिमा से मण्डित करने का प्रयास नहीं करता। नवीन विचार, भाग और आस्था को स्वीकार करने को वह उद्यत रहता है। वह समष्टि के ही संदर्भ में न सोचकर एक अकेले व्यक्ति की वेदना, पीड़ा, भावुकता, हर्ष, विषाद और अभाव को अभिव्यक्ति देने में सचेष्ट रहता है। वह वेदना से निवृति नहीं, उस ओर प्रवृति दिखाता है। उसका अडिग विश्वास मानव पर उसके गुण–दोषों सहित होता है। देवत्व पर वह कम ही आस्थापूर्ण होता है। उसे कल्पित–चमत्कारी की अपेक्षा सम्भव, सुगम और सम्भात्य ही अभीष्ट होता है। वह महान् गरिमापूर्ण महिमामय की अपेक्षा लघुमानव का उसकी सारी, लघुताओं के साथ महत्व देता है। वह अट्टालिकाओं का नहीं झोपड़ियों का मोह रखता है। मनुष्य की कामना, वासना, चित्त–वृत्तियों और छोटे–छोटे स्वप्नों को वह सहज स्वाभाविक मानता है। उनमें से जो कुछ बुरा या घटिया है उसका उदात्तीकरण या परिशमन तो उसे स्वीकार है, पर इन सबका निराकरण करके केवल आदर्श को ही स्वीकार करना उसके लिए सम्भव नहीं है। इसलिए कमज़ोर, कायर, गुणहीन या पापी को भी घृणा नहीं, सहानुभूति के साथ देखता है। वह पाप को नापसन्द करता है, पापी को नहीं और वह विश्वास करता है कि किसी के पापों, बुरे या घटिया होने के पीछे अनिवार्य पारिवारिक, सामाजिक

अथवा मानसिक अवस्थाएं उत्तरदायी हो। वह सदा सत्य की विजय घोषित नहीं करता। वह असत्य की विजय दिखाने में भी संकोच नहीं करते। कल्पित आदर्श की स्थापना की बजाय वह सत्य के लिए प्रचारक, उपदेशक और सुधारक बनाने को उद्यत रहता है।

'गोदान' और यथार्थवाद : प्रेमचन्द 'उपन्यास' शीर्षक अपने एक लेख में अपनी धारणा व्यक्त करते हो : "संसार में सदैव नेकी का फल नेकी और बदी का फल बदी नहीं होता। बल्कि इसके विपरीत हुआ करता है। नेक आदमी धक्के खाते हैं, यातनाएं सहते हैं, मुसीबतें झेलते हो, अपमानित होते हैं, उनको नेकी का फल उल्टा मिलता है और बुरे आदमी चैन करते हैं, चरित्र को उत्कृष्ट और आदर्श बनाने के लिए यह ज़रूरी नहीं कि वह निर्दोष हैं। महान् से महान् पुरुषों में भी कुछ कमज़ोरियां होती हैं। चरित्र को सजीव बनाने के लिए उसकी कमज़ोरियों का दिग्दर्शन कराने से कोई हानि नहीं होती। बल्कि यही कमज़ोरियां उस चरित्र को मनुष्य बना देती हैं। निर्दोष चरित्र तो देवता ही जीएगा और उसे हम समझ ही न सकेंगे।"

प्रेमचन्द के उपर्युक्त कथन से उनकी चिन्तन–दशा का भली प्रकार अनुमान हो जाता है। प्रेमचन्द पर आदर्शवादी, आश्रमवादी, सुधारवादी आदि होने के इल्जाम इस प्रकार लगाए जाते हैं मानो प्रेमचन्द यथार्थ तथा यथार्थवाद के विरोधी हैं पर वास्तविकता इससे भिन्न है। प्रेमचन्द क्या कोई भी व्यक्ति जीवन को श्रेष्ठ, उच्च, भला और महान् देखना चाहेगा पर एक तरीका उसे कल्पित तथा स्वप्निल महान् के रूप में देखने का है, जबकि दूसरे के अनुसार जीवन को उसके यथार्थ, आधे–अधूरे रूप में देख और स्वीकार करके हम उसे श्रेष्ठ बनाने में प्रयासरत हैं। प्रेमचन्द दूसरे भाग का ही अनुसरण करते हैं।

प्रेमचन्द में यथार्थवाद पर आस्था रखने वाले चिन्तक के सब गुण विद्यमान हैं। श्री बलदेव कृष्ण शास्त्री प्रेमचन्द के साहित्य में यथार्थवाद के निम्नलिखित तत्वों को रेखांकित करते हैं। उनके अनुसार प्रेमचन्द समसामयिक हो। उनमें वेदनानुभूति है, मान है। यह मानवीय चारित्रिक दुर्बलताओं को जीवन सत्य के रूप में स्वीकारते हैं। सामाजिक कुरीतियों, अव्यवस्थाओं के प्रति उनके हृदय में विद्रोह की भावना है। सत् पर असत् की विजय को भी स्वीकारते हैं। अपनी मान्यताओं, नीतियों और आदर्शों की स्थापना के लिए वह समाज के आलोचक बनने को उद्यत रहते हैं।

प्रेमचन्द का यथार्थवाद उनके 'गोदान' में उनकी सम्पूर्ण संरचना, घटनावृत, चरित्र विन्यास तथा जीवन–दर्शन में व्याप्त है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं।

आरम्भ से अन्त तक 'गोदान' में भारतीय कृषक की दयनीय अवस्था का पूर्ण चित्र प्राप्त होता है। प्रेमचन्द कहीं भी उसमें सुधार–परिष्कार के लिए कोई आरोपित समाधान, संस्था निर्माण या कल्पित क्रांति का मार्ग नहीं अपनाते। गोबर का नगर से लौटने पर किया गया प्रयास एक ऐसा अपवाद है जो हर क्षेत्र में कभी–न–कभी देखा जा सकता है। पर व्यवस्था परिवर्तन के बिना दशा–परिवर्तन नहीं होगा इस यथार्थ को प्रेमचन्द भली प्रकार रेखांकित कर देते हैं।

झुनिया–गोबर प्रसंग में आरम्भ से अन्त तक यथार्थ का पूर्ण निर्वाह हुआ है। विधवा झुनिया और युवक गोबर का आकर्षण और प्रणय नितान्त स्वाभाविक है। झुनिया विधवा है और साथ ही काम–काजी वर्ग से सम्बन्धित है। वह नित्य नये–नये लोगों के सम्पर्क में आती है और विविध अनुभव प्राप्त करती है। गोबर जब भोला के घर से गाय ला रहा है तो वह आधे रास्ते तक साथ आती है और गोबर को तिलकधारी पण्डित गपडू, काश्मीरी लड़कियों तथा अपने कई चाहने वालों के किस्से रस लेकर सुनाती है। मानव की काम–भावना का सहज स्वाभाविक रूप जिस सहजता से यहां प्रेमचन्द द्वारा आयोजित हुआ है, वह किसी आदर्शवादी द्वारा सम्भव नहीं। पर इसका आयोजन

प्रेमचन्द अपने पात्रों के चरित्र–विकास और कथा–विकास की सहजता के अनुरूप ही करते हैं, अश्लीलता की स्थापना के लिए नहीं, यही इसकी विशेषता है।

भले ही होरी का चरित्र आद्योपान्त आदर्श रूप में चित्रित हुआ है, फिर भी उसमें सहज चारित्रिक दुर्बलताएं प्रदर्शित करके देवत्व की सीमा छूने से उसे बचा लिया है। उसमें किसान–जन सुलभ दुर्बलताएं हैं। भोला की बुढ़ापे में फिर विवाह करने की इच्छा का वह लाभ उठाना चाहता है। उसे सगाई करवाने का प्रलोभन देकर वह उधार में उससे गाय प्राप्त करने का प्रयास करता है। उधार को वह मानो मुफ्त की बात समझता है, जबकि वह उधार जीवन पर्यन्त उसके कष्ट और अपमान का कारण रहा है। वह सोचता है, सगाई हो गई तो दो तीन वर्ष तो भोला बोलेगा नहीं। न भी हुई तो वह उसके तगादों की परवाह नहीं करेगा। यह उसकी व्यवहार–बुद्धि का परिणाम भी है और प्रेमचन्द की यथार्थवादिता का भी। लेखक के अपने शब्दों में इस यथार्थवादी दृष्टि का अच्छा परिचय प्राप्त होता है। होरी के उपर्युक्त प्रसंग में प्रेमचन्द कहते हो–"ईश्वर का रूद्र रूप सदैव उसके सामने रहता था। पर यह छल उसकी नीति में छल नहीं था। वह केवल स्वार्थ–सिद्धि थी और यह कोई बुरी बात नहीं थी। इस तरह का छल तो वह दिन–रात करता था। घर में दो–चार रूपये पड़े रहने पर भी महाजन के सामने कसम खा जाता था कि एक पाई भी नहीं है। धान को कुछ गीला कर देना और रूई में कुछ बिनौले भर देना उसकी नीति में जायज था।"

दमड़ी बंसोड से हुए बांस के सौदे में भाइयों से केवल अढ़ाई रूपए अधिक पाने के लिए वह घपला करता है, चाहे बाद में वह उसमें ठगा जाता है। इसी प्रकार सोना के विवाह के लिए रूपया प्राप्त करने के लिए वह दुलारी सहुआयन से हंसी मज़ाक, झूठी खुशामद सब करता है। प्रेमचन्द अपने पात्राों को सामान्य मानव रूप में ही चित्रित करने के लिए यथार्थ का सहारा लेते हो। रायसाहब की जीवन में हार से भी आदर्शवाद की हार और यथार्थवादी प्रवृति का परिचय प्राप्त होता है। धनिया, गोबर, झुनिया, मातादीन, सिलिया, मथुरा, झिंगुरी सिंह, भोला, नोहरी आदि ग्रामीण पात्रों तथा विभिन्न नागरिक पात्रों का चित्रण भी यथार्थवादी रीति से हुआ है। सिलिया बहुत ही समर्पण शील लड़की के रूप में चित्रित हुई है, पर सोना के घर सिलिया और सोना के पति मथुरा का साक्षात्कार और क्षणिक रूप में अधिक काम भाव बहुत यथार्थ स्थिति की परिकल्पना है। मेहता के आदर्शवाद पर मालती की बहन सरोज का व्यंग्य प्रेमचन्द समय–समय पर इसका उत्तर दिलवाने या देने को उद्यत रहते हैं। एक अवसर पर कथा उपस्थापक के रूप में स्वयं प्रेमचन्द मेहता के आदर्शवाद पर कटाक्ष करते हुए कहते हैं, "अज्ञात की तरह ज्ञान भी सरल, निष्कपट और सुनहरे स्वप्न देखने वाला होता है। मानवता में उसका विश्वास इतना दृढ़, इतना सजीव होता है कि वह इसके विरूद्ध व्यवहार को अमानवीय समझने लगता है। वह यह भूल जाता है कि भेड़ियों ने भेड़ों की निरीहता का जवाब सदैव पंजों और दांतों से दिया है। वह अपना एक आदर्श संसार बनाकर उसको आदर्श मानवता से आबाद करता है और उसी में मग्न रहता है। यथार्थता कितनी अगम्य, कितनी दुर्बोध, कितनी अप्राकृतिक है, उसकी ओर विचार करना उसके लिए मुश्किल हो जाता है।

ओंकारनाथ सम्पादक के चरित्र के माध्यम से प्रेमचन्द वर्णश्रेष्ठता, आचार श्रेष्ठता तथा देशोन्नित का पाखण्ड करने वालों का भण्डाफोड़ करने का आयोजन करते हैं। होरी से विधवा झुनिया को आश्रम देने के अपराध में पंचायत दण्ड वसूल करती है। नोखेराम और पटेश्वरी अपने बचाव की दृष्टि से सारा इल्जाम राय साहब पर रख देते हैं। वह ओंकारनाथ को सूचना देते हैं इसके बाद रायसाहब और ओंकारनाथ के बीच होने वाली बातचीत तथा परस्पर समझौता घोर यथार्थ का सूचक प्रसंग है। होरी, रायसाहब, मेहता, ओंकारनाथ आदि प्रमुख पात्रों के चित्रण में यथार्थवादी प्रवृति के उपहास द्वारा तथा झुनिया, सिलिया, नोहरी आदि पात्रों के चारित्रिक शैथिल्य

को यथावत चित्रित करके प्रेमचन्द यथार्थवादी प्रवृति का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। परन्तु यह मानने में एकदम संकोच नहीं होना चाहिए कि प्रेमचन्द कोरी यथार्थवादी रचना का सृजन नहीं कर रहे थे। शुद्ध यथार्थवाद अथवा अतिवादी यथार्थवादी उनके कला सिद्धांतों के प्रतिकूल हैं। यथार्थवादी चित्राण 'गोदान' में कला के नवीन सिद्धांतों की प्रेरणा हुआ। प्रेमचन्द मानवीय दुर्बलताओं को स्वीकार करते हैं, और दुर्बलता–विहीन किसी व्यक्ति की सत्ता इस विश्व में नहीं मानते। पर साथ ही वह मानव की सत्यवृत्तियों में गहरी आस्था से पूर्ण है और उन पर प्रकाश डालते हैं। यथार्थ में आदर्श का सम्मिश्रण करना ही वह श्रेष्ठता का विधायक स्वीकार करते हैं। उनकी यथार्थ स्वीकृति तथा आदर्शोन्मुखता की प्रवृति का ही परिणाम है कि 'गोदान' में यथार्थवाद और आदर्शवाद का समन्वित रूप सम्मुख आता है।

1.5.3 आदर्शवाद : मुख्य तत्व :

आदर्शवाद एक प्रकार का दृष्टिकोण है, जिसकी सहायता से संसार का मूल्याँकन किया जाता है। यह माना जाता है कि यथार्थ जगत् से परे भी कोई चेतन सत्ता या विचार तत्व है जो भौतिक पदार्थों की अपेक्षा अधिक सत्यपरक है। इस प्रकार जीवन के सूक्ष्मतर और काव्य मूल्यों की यह धारणा अधिक महत्व देती है। साहित्य में आदर्शवाद मानव जीवन के आन्तरिक पक्ष पर अधिक बल देता है। आन्तरिक पक्ष में मानसिक सुख, प्रसन्नता, परितोष और आनन्द आते हैं। बाह्य पक्ष में ऐश्वर्य, वैभव तथा भौतिक उन्नति आदि का समावेश है। आदर्शवादी साहित्यकार यह मानता है कि मनुष्य जब तक आन्तरिक सन्तोष प्राप्त नहीं कर लेता तब तक उसे वास्तविक आनन्द की उपलब्धि नहीं हो सकती। वह मानव की शुभ, कल्याणकारी और उच्च सम्भावनाओं के सृजन में सदा तत्पर रहता है और इस प्रयास में वह प्रायः वायवी, स्वप्नदृष्टा, अयथार्थ तथा आलौकिक स्थितियों तक पहुँच जाता है। आदर्श का संस्पर्श विचार, वस्तु या क्रिया को सहनीय बनाता है, तो इसका सत्याग्रह उन्हें आग्रह्य अविश्वसनीय तथा अवास्तविक भी बना डालता है।

आदर्शवाद की सर्वप्रमुख विशेषता अतीत के प्रति श्रद्धा भाव है। आदर्शवाद वेदना से निवृति और परम सुख की सिद्धि चाहता है। यह दैवी शक्ति और दैवी विधान पर विश्वास रखता है। बड़प्पन, महत्ता और गरिमा के प्रति आदर्शवादी की आसक्ति और लघुता छोटेपन और साधारणपन के ऊपर उसकी विरक्ति होती है। चारित्रिक दुर्बलताओं को यह एकदम सहन नहीं कर सकता। आदर्शवाद की अत्यधिक अवस्थाओं में उसकी यह असहनशीलता और उग्रता ही उसे बहुत जड़ संवेदना शून्य और क्रूर तक बना देती है, स्वयं अपने प्रति भी और अन्यों के प्रति भी। उसके लिए समष्टि–हित ही ग्राह्य होता है। इसके लिए वह व्यक्ति और व्यष्टि–हित के बलिदान के लिए सदा उद्यत रहता है। वह न्याय पक्ष की विजय का हामी ही नहीं होता, वह उसका परम विश्वास भी है। यदि यथार्थ स्थिति न बनती हो तो वह कल्पित आदर्श (यूटोपिया) की प्रस्थापना के लिए उद्यत रहता है। कला के साथ वह नीति के सम्बन्ध को स्वीकार करता है। इसलिए साहित्य की उपयोगिता के सन्दर्भ में ही देखने में वह आग्रहशील रहता है।

आदर्शवाद और 'गोदान' : समीक्षक 'गोदान' को यथार्थ की ओर उन्मुख रचना स्वीकार करते हैं। उनका कहना है कि इस उपन्यास में कोई मार्ग निर्देशन नहीं किया गया है, न सामाजिक सुधार के लिए भी किसी संस्था विशेष की स्थापना ही की गई है। सुधार सम्बन्धी किसी वाद की सूचना भी इसमें नहीं मिलती। परन्तु चरित्र–निर्माण और कथानक के विकास क्रम में प्रेमचन्द भारतीय किसान के आदर्श रूप को कहीं भी नहीं भूलते। भारतीय संस्कृति शिव अथवा कल्याण की भावना को अनिवार्य मानती है। अशिव को हम मानव हित के कारण स्वीकार ही नहीं करते तथा सदा शिव की स्थापना में प्रयासरत रहता मानवीय कर्त्तव्य माना गया है। इस सन्दर्भ में प्रेमचन्द इस

सांस्कृतिक मान्यता में पूर्ण आस्था रखते हैं। प्रगतिशील लेखक संघ के अधिवेशन के अध्यक्षीय भाषण में वह कहते हैं–"जिस साहित्य में हमारी सुरूचि न जगे, आध्यात्मिक और मानसिक तृप्ति न मिले, हममें शांति और गति न पैदा हो, हमारा सौंदर्य–प्रेम न जागृत हो, जो हममें सच्चा संकल्प और कठिनाइयों पर विजय पाने की सच्ची दृढ़ता न उत्पन्न करे, वह आज हमारे लिए बेकार है वह साहित्य कहलाने का अधिकारी नहीं है," इसी सन्दर्भ में उनका कहना है–"मैं और चीजों की तरह कला को भी उपयोगिता की तुला पर तोलता हूँ–कलाकार अपनी कला में सौंदर्य की सृष्टि करके परिस्थिति को विकास के उपयोगी बनाता है।"

इस प्रकार प्रेमचन्द का घोर यथार्थवादियों से भेद स्पष्ट हो जाता है। पर यह बात भी उतनी ही सही है कि वह आदर्शवाद की जड़ कल्पित और स्वप्निल सीमाओं तक ले जाने का आग्रह भी नहीं दिखाते। 'गोदान' का कुछ न्यायदर्शक विवेचन प्रेमचन्द की आदर्शवाद सम्बन्धी धारणा और उसके अनुप्रयोग को स्पष्ट करेगा।

प्रेमचन्द चारित्रिक दुर्बलताओं के नग्न चित्रण में और मानव की दुष्प्रवृतियों को शिष्टता की सीमा के अतिक्रमण के स्तर पर चित्रित करने के विरूद्ध हो। गोबर व झुनिया के प्रथम संवाद में ऐसी स्थिति सहजता से दिखाई जा सकती थी। झुनिया के प्रसंगों को वह उसकी चरित्रगत दृढ़ता और समर्पणशीलता के स्वर पर आकर समाप्त करते हैं। सारे प्रसंग का दुष्प्रभाव नहीं पड़ता। मानवीय काम वासना का खुला और स्वस्थ चित्रण होकर भी झुनिया द्वारा शिथिल चरित्र व्यक्तियों की आलोचना करवा कर इसे आकर्षक उपयोगी मोड़ दे दिया गया है।

'गोदान' का कथानायक होरी तो अपनी आदर्शवादिता तथा जड़ आदर्शवादिता के कारण ही जीवन पर्यन्त पिसता रहा है। होरी में आदर्श पात्रों की रूढ़िवादिता है। परम्परा और पुराने संस्कारों के प्रति उसमें आग्रह है। पाप–पुण्य की सही या गलत धारणा से वह सदा आक्रान्त रहता है। वह भोला से गाय लेना चाहता है, पर जैसे ही उसे लगता है कि भूसे की तंगी के कारण ही वह गाय बेचने तक को उद्यत है, तो होरी किसी के जलते घर के हाथ सेंकने से विरत हो जाता है। वह उसे मुफ्त भूसा देने का प्रस्ताव करता है, और गाय उधार पर ही स्वीकार करता है।

होरी का भाई हीरा गाय को ज़हर देकर होरी की जीवन भर की साध, उसके सपनों की हत्या कर देता है। पर उसकी इज़्ज़त के कारण होरी इस बात को सबसे छिपाना चाहता है। यहां तक कि इसके लिए धनिया से कठोर व्यवहार भी करता है और जब दारोगा हीरा के घर की तलाशी लेना चाहता है तो कुल की इज़्ज़त बचाने के लिए वह अपनी परम विपन्न अवस्था में और अपनी गाय की हत्या होने की भारी हानि होने और क्षोभ की अवस्था में भी पंचों से कर्ज़ लेकर दारोगा का मुंह बन्द करना चाहता है। झुनिया को शरण देने पर भी वह पंच उस पर भारी दण्ड लगाते हो तो धनिया साफ इन्कार करके उल्टा पंचों पर आरोप लगाती है। पर पंचों को परमेश्वर मानने वाला होरी उसके इस अन्याय को सहन नहीं करता स्वयं अपने सिर पर ढो कर अन्न पंचों की ड्योढ़ी में प्रस्तुत करता है। नकद जुर्माना वह कर्ज लेकर चुकाता है, और अपना तथा अपने बच्चों का पेट खाली रखने पर मजबूर होता है। दातादीन का तीस रूपये का कर्ज बढ़कर दो सौ रूपये हो चुका है। गोबर नगर से लौटकर सही हिसाब सत्तर रूपया लौटाने और हिसाब साफ करने को तैयार है। पर होरी का धर्म भीरू मन यही कहता है कि ब्राह्मण का पैसा है, हाड फाड़ कर निकलेगा। वह दातादीन को उसकी पाई–पाई चुकाने का आश्वासन देता है। रूपा की शादी के अवसर पर भावी जामाता रामसेवक से लिया गया पैसा होरी जैसे आदर्शवादी को तोड़ देता है। वह किसी के सामने भी नहीं आ पाता। वह निर्णय करता है कि वह कड़ी मेहनत करके राम–सेवक

की पाई–पाई चुका देगा और श्रम के कारण उसी मृत्यु हो जाती है। होरी की यह पराजित मानसिकता उसकी आदर्शवादिता का परिणाम है।

'गोदान' के रायसाहब भी जमींदार वर्ग के प्रतिनिधि होने पर भी विशेष हैं। वह द्विविधा की स्थिति में हैं। उनके चरित्र व्यवहार, बातचीत सब में यथार्थ और आदर्श का समन्वय प्राप्त होता है। वह अपने वर्ग उसके शोषण और उसकी जाहिरदारी की निन्दा करते हैं। किसानों के शोषण का वह विरोध करते हैं तथा उनकी दीन दशा पर सहानुभूति दिखाते हैं। पर वह सब कुछ भी वे करते हैं, जो अन्य ज़मींदार करते हैं। राय साहब की अन्त में पराजय भी वस्तुतः आदर्शवादिता की ही पराजय है।

मेहता आदर्शवाद के महत्व और जड़ दोनों रूपों का प्रतिनिधित्व करते हैं। वह कुछ सिद्धांतों पर विश्वास करते हैं और तदनुरूप ही जीवन जीना चाहते हैं। मालती की परीक्षा में, नारियों सम्बन्धी उसके दृष्टिकोण में तथा जीवन के अन्य पक्षों में उसके विचार इन्हें दोनों ध्रुवान्तों के बीच झूलते प्रतीत होते हैं। होरी का आदर्शवाद जहां उसके अज्ञान का परिणाम है वहां मेहता का आशीर्वाद उनकी विद्या अथवा ज्ञान से पैदा होने वाली अव्यावहारिक जड़ता का परिणाम है। प्रेमचन्द मेहता के आदर्शवाद के इस पक्ष पर उपन्यास में स्वयं कड़ी टिप्पणी करते हैं। तितली मालती को आदर्श मधुमक्खी के रूप में विकसित और चित्रित करना भी इसी सामाजिक और वैयक्तिक आदर्श आस्था की परिणति है। गोविन्दी का चरित्र–चित्रण, मेहता द्वारा उस पर असीम श्रद्धा की अभिव्यक्ति तथा अन्त में उसके पति खन्ना द्वारा भी अपनी इस आदर्श पत्नी के महत्त्व की स्वीकृति प्रेमचन्द की आदर्श प्रस्थापना का सजग प्रयास है। मालती में सेवा, निष्ठा, त्याग का उदय, झुनिया का समर्पित पत्नित्व, सिलिया का एकनिष्ठ प्रेम भी 'गोदान' के आदर्श स्वरों को स्पष्ट करते हैं। विभिन्न ग्रामीण तथा नागरिक पात्रों के जीवन, क्रिया–कलाप तथा आस्था का यथार्थ चित्रण करके भी प्रेमचन्द उनका समाहार किसी न किसी प्रकार आदर्श मर्यादा और नैतिकता के धरातल पर ही करके सन्तोष करते हैं।

निर्णय रूप में यही कहा जा सकता है कि 'गोदान' को न तो एकान्तिक रूप में यथार्थवादी और न घोर और जड़ आदर्शवादी रचना कहा जा सकता है। 'गोदान' में यथार्थवाद और आदर्शवाद का समन्वित रूप पाठकों के सामने आता है। आदर्श और यथार्थ से चित्रण में प्रेमचन्द संयम को अपने हाथ से नहीं जाने देते। यथार्थ और आदर्श का सम्मिश्रण 'गोदान' में प्राप्त होता है। इसमें यथार्थ की झलक है....तो आदर्श का संकेत भी निहित है। प्रेमचन्द साहित्य को समाज दर्पण ही नहीं उसका दीपक भी मानते थे। वह कहते थे कि हमें प्राचीन आदर्शवाद की मर्यादा का पालन तो करना चाहिए। पर उसमें यथार्थ का ऐसा सम्मिश्रण करना चाहिए कि सत्य से दूर न जाना पड़े। प्रेमचन्द के अपने ही शब्द इस संदर्भ में सर्वाधिक प्रामाणिक हो। उन्होंने कहा था कि 'गोदान' में आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की कल्पना करनी होगी।

1.5.4 गांधीवाद और 'गोदान' :

गांधीवाद अथवा गांधी दर्शन को सर्वथा मौलिक दर्शन नहीं कहा जा सकता। वह भारत की दार्शनिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक सुदीर्घ परम्परा का व्यवस्थित समन्वित और परिष्कृत आधुनिक रूप है। सर्वोदय का गांधी जी के विचारों में विशेष महत्व देते हैं। उनके चिन्तन में प्राचीन तथा उसके भी केवल तर्क–संगत आधुनिक स्वरूप को स्वीकृति प्राप्त है। प्राचीन के जड़, मानव–विरोधी और समता विरोधी तत्व यह स्वीकार नहीं करते। पूर्वी चिन्तन के साथ पाश्चात्य मानवतावाद, अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि, ईसा की दया, क्षमा, करूणा, पश्चाताप और सेवा आदि की अति

महान् धारणाओं का मनोहर समन्वय गांधी–दर्शन में प्राप्त है। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य अपरिग्रह जैसे औपनिषदिक जीवन सूत्रों में गांधी जी शरीर–श्रम अस्वाद, सर्वत्र भय वर्जन जैसे कुछ और तत्वों को समाविष्ट करके नवीन सांस्कृतिक जीवन–संहिता की रचना करते हैं। गांधी जी की सत्य और कर्म पर आस्था उनके सत्याग्रह के रूप में व्यक्त होती है। सत्याग्रह का क्षेत्रा बहुत विस्तृत है। डॉ. लक्ष्मी नारायण दूबे के अनुसार इस में समझाना–बुझाना, उपवास, असहयोग, सविनय, अवज्ञा, करबन्दी, धरना आदि सबका समावेश हो जाता है। गांधी दर्शन का व्यावहारिक पक्ष बड़ा विस्तृत है। स्वेदशी का सिद्धांत इसके केन्द्र में है। गांधी जी का अट्ठारह सूत्री कार्यक्रम सत्याग्रह–युद्ध का प्रधान अंग है। आर्थिक समानता, खादी, ग्रामोद्योग के विकास आदि के द्वारा गांधी जी अपने कार्यक्रम के आर्थिक पक्ष पर बल देते हैं। सामाजिक पक्ष के अन्तर्गत वह साम्प्रदायिक सौहार्द्र, अस्पृश्यता–निवारण, नारी–जागरण, कृषक, श्रमिक, विद्यार्थी संगठन, समाज–सेवा, स्वच्छता आदि को महत्त्वपूर्ण मानते हैं। शिक्षा के क्षेत्र में बुनियादी शिक्षा, मातृभाषा का प्रयोग तथा राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी का विकास और प्रसार उनकी नीति के केन्द्रीय विषय हैं। गांधी जी का केवल राजनीति ही नहीं भारतीय सामाजिक, धार्मिक, नैतिक तथा शैक्षिक आदि सभी जीवन क्षेत्रों में गहरा प्रभाव पड़ा। गांधीवाद ने भारतीय साहित्य को भी गहराई से प्रभावित किया।

प्रेमचन्द के सृजनकाल का बड़ा भाग बृहत्तर गांधीवाद के वृत्त में ही आता है। अपनी चेतना के संदर्भ में प्रेमचन्द गांधी जी के बहुत निकट पड़ते हैं। अतः प्रेमचन्द साहित्य पर गांधीवाद विचार और व्यवहार की गहरी छाप दृष्टिगत होती है। हिन्दी में गद्य–लेखन में प्रेमचन्द ही गांधीवादी विचारधारा के लिए प्रवेश–द्वार उन्मुख करते हैं। प्रेमचन्द का गांधीवाद के प्रभाव को उनकी रचनाओं के माध्यम से सहज ही जाना–पहचाना जा सकता है।

स्वयं प्रेमचन्द का कहना है–"मैं महात्मा गांधी का बना–बनाया कुदरती चेला हूं।" प्रेमचन्द की प्रेमाश्रम (1923), रंगभूमि (1925), कायाकल्प (1926), निर्मला (1927), गबन (1931) और कर्मभूमि (1942) गांधी–युगीन औपन्यासिक रचनाएं हो। प्रेमचन्द का किसान–समस्या का समाधान सीधे–साधे गांधीवाद से प्रभावित है। इस उपन्यास में ट्रस्टीशिप, हृदय–परिवर्तन, राम राज्य, वर्तमान (अंग्रेजी) शिक्षा–पद्धति का विरोध, पश्चाताप, नैतिकतावादी चरित्र–विन्यास आदि सब गांधीवाद प्रभाव की परिणति है। 'रंगभूमि' में तो गांधीवाद अपने पूर्णतम रूप में विद्यमान है। 'रंगभूमि' का सूरदास गांधी जी का ही एक रूप है। 'गबन' में स्वदेशी आन्दोलन की झलक प्राप्त है तो 'कर्मभूमि', सविनय अवज्ञा आंदोलन और लगान–बन्दी आंदोलन की पृष्ठ–पीठिका पर रचित हुआ है। अछूतोद्धार, नारी–सुधार, शिक्षा–प्रचार, समाज–सुधार का उपक्रम प्रेमचन्द की सभी रचनाओं में परिव्याप्त है। उपन्यासकार प्रेमचन्द की अपेक्षा कहानीकार प्रेमचन्द गांधीवाद से अधिक प्रभावित और संचालित हुए हैं। प्रेमचन्द के प्रमुख पात्र सूरदास, विनय, चक्रधर, अमरकान्त, प्रेमशंकर आदि सब गांधीवाद के ध्वज को ही ऊंचा फहराते हुए आगे बढ़ते हैं।

पर अपने बाद के लेखन में प्रेमचन्द गांधीवाद से कुछ दूर हटते प्रतीत होते हैं। बल्कि इस बात को यूं भी कहा जा सकता है कि गांधी जी के बृहत्तर नैतिक और वैचारिक आधार को ग्रहण करते हुए भी प्रेमचन्द गांधीवाद के व्यावहारिक पक्ष में दूर होकर अधिक यथार्थवादी, वस्तुवादी अथवा कुछ–कुछ अनास्थावादी होते गए हैं। 'गोदान' प्रेमचन्द के इसी पूर्ववर्ती मोहभंग की रचना है। यह मोहभंग दो स्तरों पर होता है–एक–पूर्ववर्ती सुधार–परिष्कार, हृदय परिवर्तन के अपने समाधानों से मोहभंग तथा गांधीवाद तथा अन्य सुधार आंदोलनों द्वारा प्रस्तावित समाधानों के प्रति मोहभंग। प्रेमचन्द मार्क्सवादी प्रभाव में उत्तरोत्तर यह मानने की ओर अग्रसर होते हैं कि आर्थिक–सामाजिक व्यवस्था ही मानवीय सम्बन्धों और उसकी मूल्य–दृष्टि को निरूपित करती है।

इस प्रकार नकली समाधान की बजाय वे उत्तर दिशा में देखना आरम्भ करते हैं उनका होरी और मेहता दोनों पराजित होते हैं। उनका गोबर गांधी–दर्शन का विरोधी तो नहीं, पर वह निश्चित रूप में भिन्न मार्ग का अनुसरण करता है। स्पष्ट तो नहीं है, पर ऐसा प्रतीत होता है कि गोबर से या उसके माध्यम से गोबर की पीढ़ी से प्रेमचन्द को अब अधिक आशा थी, जो यदि वह जीवित रह कर और लेखन करते तो शायद सिद्ध होता। फिर भी 'गोदान' में मेहता, मालती, रायसाहब, ओंकारनाथ, गोबिन्दी आदि के चरित्रों और कृत्यों में युगीन आकांक्षाओं और अपेक्षाओं को अभिव्यक्ति प्राप्त हुई है। इसे प्रत्यक्ष न सही तो परीक्षा से गांधीवाद द्वारा प्रभावित और संचालित तो रहना ही था।

1.5.5 'गोदान'–ग्राम–जीवन तथा नगर–जीवन का दस्तावेज़-प्रमुख समस्याएं

'गोदान' का इतिवृत्त बहुत विस्तीर्ण और बहुमुखी है। इसमें ग्राम के कृषक–श्रमिक वर्ग तथा उनके सब छोटे–बड़े शीर्षक समाविष्ट हैं। दूसरी ओर नगर–समाज के मध्यवर्ग के लगभग सभी वर्ग–उपवर्ग उनकी रचनाओं में तथा विशिष्टतः 'गोदान' में विद्यमान हैं। ये दोनों वर्ग मिल कर भारत की 90 प्रतिशत जनता का निर्माण करते हैं। शेष पांच प्रतिशत में उच्च वर्ग आता है जिसका भी हल्का संस्पर्श 'गोदान' में प्राप्त है। इस प्रकार 'गोदान' को ग्रामीण और नगर–जीवन का विशिष्टकालीन विश्वस्त दस्तावेज़ कहा जा सकता है।

ग्राम जीवन : कथा का आधार ही अवध के बेलारी ग्राम, उसका किसान होरी तथा उसका परिवार है। उसके भाई–बन्धु और बिरादरी हैं जो उसी की तरह शोषित, पीड़ित, दलित और त्रस्त जीवन बिता रहे हैं। उसके शोषक जम दार, उसके कारिन्दे, पंच, महाजन, पुलिस आदि हैं। ये सब वर्ग अपनी अन्तः क्रियाओं द्वारा स्वन्त्रतापूर्व के हिन्दी–क्षेत्र का विश्वसनीय चित्र प्रस्तुत करते हैं। होरी किसान है। वह दलित, शोषित और पीड़ित है, पर फिर भी उसकी आस्था–विश्वास उसकी नीति–मर्यादा, उसके विधि–निषेधों का अपना संसार है जो उसकी गहरी जकड़न में जकड़े हुए हैं। होरी के माध्यम से ग्राम समाज अपने सारे वैविध्य के साथ 'गोदान' में साकार हो उठा है। ग्राम में सम्मिलित परिवार प्रथा टूट चुकी है। परिवारों में प्रेम का नितान्त अभाव है जिसका हमारी जातीय दाय के रूप में गुणगान होता रहा है। कारण आर्थिक–सामाजिक शोषण से उत्पन्न अमानवीय और पाशविक स्थितियां हो सकती हैं जो शोषक ओर शोषित दोनों की मानवता के विनाश का कारण बनती हैं। हमारी संस्कृति कहती है कि पति–पत्नी, भाई–बहन, सन्तान, माता–पिता, मित्र–सम्बन्धी सब मिल–जुल कर, स्नेह–सद्भाव के साथ, परस्पर आदर–मान के साथ जीवन–यापन करें। स्वामी सेवक को पुत्रवत और सेवक स्वामी को देववत समझें। पर यह सब कोरी कल्पना प्रतीत होती है। सम्भवतः इसका कारण सतत जातीय पराजयों का इतिहास, सुदीर्घ परतन्त्रता तथा आर्थिक नैतिक शोषण रहा है, जिसमें समाज को पशु–स्तर तक नीचे पहुंचा दिया है। भोला और होरी के संवाद द्वारा इसी सामाजिक–पारिवारिक दुखावस्था को भरपूर वाणी प्राप्त होती है–दोनों अपने–अपने परिवार के टूटने, पुत्रों भाईयों, भाभियों के अलग–अलग रहने और उनके वैमनस्य का वर्णन विवेचन करते हैं। गोबर–झुनिया के वार्तालाप में नैतिकता की एक स्थिति की झलक प्राप्त होती है, तो सिलिया, मातादीन प्रसंग में आभिजात्य के छद्म गौरव को अनावृत किया गया है। रायसाहब के आत्मकथन में उनके वर्ग के ह्रासशील एवं अनैतिक जीवन का परिचय प्राप्त होता है। दातादीन झिंगुरी सिंह, पटेश्वरी, नोखेराम आदि तो ग्रामीण समाज में शोषण के निकटतम रूप के प्रतिनिधि हैं पर दूसरी ओर अपनी दयनीय स्थिति में भी होरी का आदर्श उसके पुत्र का आत्म–सम्मान, सिलिया का समर्पण, झुनिया का आदर्श पत्नीत्व, धनिया का आत्मविश्वास वे तत्व हैं जो ग्राम समाज को अभी भी सुरक्षित रखे है। वन की एक काली–कलूटी आदिवासी कन्या द्वारा मेहता–मालती की सेवा

का आदर्श हमारे सुसभ्य समाज में कहाँ प्राप्त है। इसी प्रकार मिर्जा अपनी सेवा–सुश्रुषा करने वाली साधनहीन ग्राम बाला की लगन और भावना को प्रशिक्षित और प्रभूत प्रतिदान पाने वाली नर्स से कहीं श्रेष्ठ मानता है। यह हमारे उत्पीड़ित ग्राम समाज का एक अन्य शुक्ल रूप है। शोषकों के प्रति भी होरी तथा उसके वर्ग द्वारा हिंसक प्रतिक्रिया का अभाव जहां शोषण के प्रचलित रहने का आधार है वहां यह भारतीय सहनशीलता के आदर्श का भी सूचक है, जिसका हमारे पूंजीवादी समाज में अभाव होता जा रहा है। इस प्रकार 'गोदान' में अपने अच्छे–बुरे, शुक्ल–कृष्ण, ऊंचे–नीचे सब रूपों में भारतीय ग्राम का सर्वांग चित्र प्राप्त होता है, और इस प्रकार 'गोदान' को भारतीय ग्राम–जीवन का प्रामाणिक दस्तावेज़ कहा जा सकता है।

नगर–जीवन : नगर जीवन का मध्य वर्ग भी 'गोदान' में अपने पूरे वैविध्य के साथ उजागर हुआ है। प्रेमचन्द द्वारा 'गोदान' में अपनाए गए परिवेश में नगर अभी पूरी तरह से औद्योगीकृत और यंत्रीकृत नहीं हुए थे। विशेष रूप में अवध क्षेत्र समुद्र तटवर्ती क्षेत्रों की अपेक्षा इस दृष्टि से अभी काफी अविकसित थी। फिर भी वकील, सरकारी कर्मचारी कोट–कचहरी के अफसर, अध्यापक, डाक्टर, राजनीतिक नेता, सम्पादक, मज़दूर, दलाल, मिल–मालिक, बैंकर आदि सब वर्ग अपनी–अपनी व्यावसायिक विशेषताओं के साथ 'गोदान' में उपस्थिति हैं। 'गोदान' के मुख्य कथानक का आयोजन सम्भवतः ग्राम समाज की विडम्बनाओं की अधिक गहराई के लिए ही हुआ है। पर ग्राम कथा 'गोदान' में इतने स्वतन्त्र और पूर्ण रूप से विकसित हुई है कि ग्राम से जुड़े उसके सूत्रों को विछिन्न करने पर यह अपने आप में परिपूर्ण लघु–उपन्यास के रूप में ग्रहण हो सकती है।

नगर में मिल जाने से ग्राम के आर्थिक ढांचे पर प्रभाव पड़ता है। ईख की खड़ी फसल बिक जाती है। चीनी सस्ती पड़ती है तो गुड़ की मांग कम हो जाती है। अब गुड़ कौन बनाए। इस प्रकार बड़ी संख्या में गांव के बेरोज़गार लघु किसानों को जो काम मिलता था वह नहीं मिलता है। उनकी आय पर प्रभाव पड़ता है। मिल मालिक मोटे होते हैं और किसान मजूदर और भी दुबले। बेदखली और कुड़की आती है और किसान मज़दूर बनकर शहर की ओर भागने को बाध्य होता है। नगर में भी मजदूर शोषित है। शोषण का दमनकारी चक्र बहुत तेज़ गति से घूमता है। मेहता का खन्ना को किया गया एक सम्बोधन दृष्टव्य है–"आपके मज़दूर बिलों में रहते हैं; गन्दे बदबूदार बिलों में जहां एक मिनट भी जाए तो आपको कै हो जाए। कपड़े जो वह पहनते है उनसे आप जूते भी न पोछेंगे। खाना जो वह खाते हैं वह आपका कुत्ता भी न खायेगा।" राजनीतिक परिस्थितियों का भी परोक्ष संकेत प्राप्त है। पचास वर्षो के बाद कांग्रेस केवल ऐसेम्बलियों में कुछ सीटें प्राप्त करने भर का मताधिकार पा सकी थी। सारा ज़ोर राजनीतिक स्वतन्त्रता की दिशा में केन्द्रित होने के कारण समाज सुधार अभी अपेक्षित था। गांधी जी इस दिशा में बार–बार प्रयास आह्वान करते रहे थे, पर अभी नेतृत्व का ध्यान, भाषण, जेल, आत्मवश, वोट तक ही सीमित था। 'गोदान' में रायसाहब और खन्ना जैसे शोषकों को राष्ट्रवादियों की जमात में खड़ा करके वास्तव में इस वर्ग का मज़ाक उड़ाया है और तत्कालीन राजनीतिक हलचल का उद्‌घाटन भी हुआ है।

नारी समस्या अपने ग्राम तथा नगरीय संदर्भों में 'गोदान' में उठाई गई है। पर इसके नगरीय पक्ष में कुछ परिवर्तन, कुछ आक्रोश और विद्रोह के दर्शन होते हैं। मालती का चरित्र दृष्टि से स्वतन्त्र एक उच्च–स्तरीय काम–काजी महिला का अच्छा उदाहरण है। सरोज के चरित्र में भी इस मुक्ति और विद्रोह की कुछ झलक प्राप्त है। पर मीनाक्षी के चरित्र में इसका उग्र व्यावहारिक रूप प्रकट हुआ है, जहां वह हंटर लेकर पति की रंगशाल में पहुंच कर पति और उसके लफंगे मित्रों को तितर–बितर कर देती है।

इसी प्रकार मिर्ज़ा खुर्शीद, तनखां, खन्ना, मेहता आदि पात्रों के जीवन, व्यवहार, चिन्तन आदि द्वारा प्रेमचन्द नगर जीवन में आने वाले तेज परिवर्तन को संकेतित करने में सफल हुए है। अर्थ का महत्त्व दिनोदिन बढ़ता जा रहा है। पूंजीवादी, मिल मालिक और बैंकर न केवल आर्थिक दृष्टि से दृढ़ होते जा रहे हैं, उनका सामाजिक पद भी पूंजीवाद में बढ़ रहा है। सामन्ती व्यवस्था में धन भले ही, सेठ को प्राप्त हो रहा है, पर सामाजिक मर्यादा में धर्म और नैतिकता के क्षेत्र में ब्राह्मण और शासन–शक्ति में सामन्त राजा शीर्ष पर रहे हैं। अब पूंजीवादी व्यवस्था में रायसाहब जैसे ताल्लुकेदार को भी खन्ना जैसे बैंकर के सामने गिड़गिड़ाना पड़ता है। उच्च प्रशासनिक अधिकारी भी उसकी जी हजूरी करते हैं। इस प्रकार इस बदलती व्यवस्था में समाज के अन्य सम्बन्धों में भी परिवर्तन दिखाई देता है जिसका 'गोदान' में संकेत रूप में काफी चित्रण हुआ है।

नगर में समाज सुधारकों में भी एक वर्ग उभर रहा है। इनमें कुछ ईमानदारी से कुछ न कुछ समाजहित में करना चाहते हैं, तो अन्यों के लिए यह फैशन मात्र है। कार्य शिक्षा और होने वाले प्रभाव के सम्बन्ध में स्पष्टता का अभाव होने पर कुछ प्रयासों की सदाशयता असंदिग्ध है, जबकि कहीं–कहीं यह भी केवल मनोरंजन का साधन है। मिर्जा खुर्शीद का कबड्डी आयोजन, मालती द्वारा चन्दा इकट्ठा करना आदि इसी वर्ग के प्रयास है। मेहता का शोषण और उत्पीड़न सम्बन्धी सारा दर्शन, महिलाओं के समक्ष भाषण आदि भी इसी प्रकार के मध्यवर्गीय प्रयासों के उदाहरण है। इसी प्रकार भले ही 'गोदान' में शहरी मध्यवर्ग को अपनी सम्पूर्ण कुरूपताओं–विद्रूपताओं को अपनी शक्ति–सामर्थ्य और अपनी आकांक्षाओं–अपेक्षाओं के परिप्रेक्ष्य में चित्रित करना लक्ष्य नहीं रहा है। पर इस कथा का आयोजन एक विशिष्ट काल और विशिष्ट परिवेश की अपनी समग्रता में प्रस्तुत करना लक्ष्य अवश्य रहा है, इस समग्रता में ग्राम और ग्राम समाज मात्रात्मक रूप में भी अधिक है, और प्रेमचन्द के सजग प्रयास के रूप में भी कृषक–कथा प्रधान होने से ग्राम–कथा के केन्द्र में आ गया है। फिर भी नगर कथा को जिस वैविध्य और विस्तार के साथ प्रस्तुत किया गया है, उसमें 'गोदान' को आंशिक रूप में नगर जीवन का भी प्रामाणिक दस्तावेज़ कहा जा सकता है।

गोदान : समस्याएं : प्रेमचन्द की सभी कथात्मक रचनाओं में प्रेमचन्द का युग अपने वैविध्य और विस्तार के साथ प्रतिफलित हुआ है। प्रेमचन्द के अपने मन जगत् और चिन्तन के साथ–साथ उसका बर्हिजगत् भी उसकी रचनाओं में भली प्रकार प्रतिबिम्बित हुआ है। बर्हिजगत् में समाज सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। समाज, विविध, वर्गों और व्यक्तियों के परस्पर घात–प्रतिघात, क्रिया–प्रतिक्रिया, सहयोग और विरोध की परिणति होती है। इस अन्तः क्रिया की परिणति अनेक प्रकार की सामाजिक, आर्थिक, नैतिक और वैचारिक व्यवस्थाओं के विकास के रूप में होती है। जहां ये व्यवस्थाएं मानव के सामाजिक जीवन को व्यवस्थित, नियमित और अनुशासित करती हैं, वही इनका नियन्त्रण कई स्थितियों में उत्पीड़न, दमन आदि का कारण भी बनता है। इसी से संघर्ष की स्थितियां पैदा होती है और अनेक प्रकार की समस्याओं का विकास होता है। कोई भी समाज अपने विधि, व्यवस्थाओं से मुक्त नहीं होता। वस्तुतः हर जीवित समाज और उसके घटकों को समस्याओं से लगातार टकराना, उनका समाधान खोजना, फिर नई समस्याओं का जन्म और फिर संघर्ष उस समाज की सजीवता के चिन्ह हैं। 'गोदान' में भी विभिन्न प्रकार की समस्याओं का रेखांकन हुआ है, और इन समस्याओं के प्रति समाज की प्रतिक्रिया और संघर्ष के संकेत दिए गए हैं।

प्रेमचन्द का युग–सांस्कृतिक और राजनीतिक संघर्ष का युग था। विदेशी शासन, नई आर्थिक व्यवस्था, नई शिक्षा–नीति, नए प्रकार के रोज़गार का ढांचा और इन सबके कारण होने वाले सांस्कृतिक संक्रमण का भारत के जन–जीवन, उसके चिन्तन, व्यवहार, आदि पर गहरा प्रभाव पड़ रहा था। अंग्रेज़ों से सम्पर्क के कारण जहां भारतीय जाति अपनी पराधीनता, आर्थिक शोषण और

सांस्कृतिक प्रभाव के सम्बन्ध में सजग हो रही थी, वहां ही नए ज्ञान के आलोक में वह अपने ही हज़ारों वर्षों से पैदा हुए अनेक दोषों, कुरीतियों, पाखण्डों और अन्धविश्वासों को भी देखने और जानने में समर्थ हो रही थी। आर्य समाज, ब्रह्म समाज, देव समाज, इण्डिन नैशनल कांग्रेस आदि का अभ्युदय इसी जागरण की परिस्थितियां थीं। इसी प्रकार अशिक्षा, विधवा समस्या, नारी शोषण, बाल–विवाह, वृद्धविवाह, दहेज–प्रथा, कृषक और श्रमिक का शोषण उत्पीड़न, अछूत समस्या, अंध विश्वास आदि इस प्रकार की समस्याएं थीं जो युग जीवन का मंथन कर रही थीं। प्रेमचन्द के विपुल कथा साहित्य में इन सब तथा अन्य भी अनेक सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और नैतिक समस्याओं का सजीव चित्रण हुआ है। चित्रण ही नहीं, अपने आरम्भिक प्रयासों में वह किसी न किसी प्रकार का समाधान भी प्रस्तावित करते हैं। ये सुधार या समाधान तक कसौटी पर खरे उतरते हैं या नहीं, यह विवादस्पद है। ये सुधार प्रेमचन्द के संकल्प, उनकी कामना, उनकी इच्छा, उनकी सदाशयता की अभिव्यक्ति हैं, इसमें संदेह नहीं। बलदेव कृष्ण शास्त्री का इस सन्दर्भ में कथन है कि प्रेमचन्द के ये सुधार और समाधान संकल्पात्मक अनुभूति के आधार पर प्रस्तुत किये हैं, ये भाव प्रेरित हैं अतएव समाजशास्त्र में, अर्थशास्त्र में, नीतिशास्त्र में इनका कुछ महत्त्व हो या न हो साहित्य के क्षेत्र में इनका पूरा महत्त्व है। इनकी अपनी विशेषता है, प्रेमचन्द अपने युग की परिस्थितियों के साथ रहे हैं, उन्हें अत्यन्त निकटता से परखा है, उनसे लुब्ध एवं क्षुब्ध हुए हैं। वह अपने गुरु के साथ चलते–चलते कभी–कभी भावावेश के प्रभाव में आकर वर्तमान से भी आगे भागते दिखाई पड़े हैं। वह अपने कल्पना लोक में स्वयं और लोक समस्या–समाधान की तत्परता उनके आरम्भिक उपन्यासों में अधिक प्रकट हुई है। 'गोदान' तक आते–आते या तो उनका पर्याप्त मोहभंग हो चुका था, या वह अधिक यथार्थदर्शी बन चुके थे फिर भी समस्या आंकलन भरपूर रूप में हुआ है।

देश प्रेम, राष्ट्रीय भावना, आत्मगौरव और इन सबसे अद्भुत स्वतन्त्रता–प्राप्ति का संघर्ष प्रेमचन्द काल का सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रेरक तथा उत्तेजक विषय रहा है। प्रत्यक्ष या परोक्ष हमारे हर प्रकार के सामाजिक वर्ग को यह प्रभावित कर रहा था। 'गोदान' में इसका प्रत्यक्ष दर्शन तो नहीं होता, पर सजग वर्ग की परस्पर वार्तालाप, चिन्तन–अनुचिन्तन में, ऐसेम्बली, समाचार–पत्रों आदि सम्बन्धी प्रसंगों में रखकर उल्लेख अवश्य प्राप्त होता। बृहत्तर रूप में समय भारतीय नवजागरण में स्वातंत्रय–संघर्ष की अनुगूंज प्रत्यक्ष है।

प्रेमचन्द ने अपने सम्पूर्ण साहित्य में पीड़ित मानव की सबल वकालत की है। उनके लिए न्याय की प्रार्थना अथवा न्याय के संघर्ष का कोई न कोंई रूप प्रेमचन्द अवश्य प्रस्तावित करते हैं। नारी प्रेमचन्द के आदर, सम्मान, मोह और सहानुभूति का विशेष पात्र रही है। वह माता, पत्नी, बहन, प्रेमिका, पुत्री, सेविका, रखैल, यहां तक कि वेश्या किसी भी रूप में उपेक्षिता और पीड़ित है। प्रेमचन्द नारी का न्याय और आदर दिलवाने सचेष्ट होते है। 'गोदान' में मालती को तितली रूप में आरम्भ में प्रस्तुत करके उसे मधुमक्खी रूप में, त्याग, सेवा और प्रेम की देवी के रूप में विकसित किया गया है। गोविन्दी को आदर्श पत्नी व माता के रूप में, तथा पति द्वारा उपेक्षित चित्रित किया गया है। अन्त में खन्ना इसी से बल, शक्ति, साहस और धैर्य प्राप्त करता हैं वह अब देवी के समान उसकी पूजा करता है। धनिया सामान्य कृषक नारी है। होरी के आदर्श या मूर्खता के कारण वह जीवन पर्यन्त दुःख सहन करती है। परन्तु उसकी सेवा, त्याग तथा होरी के प्रति अनन्य समर्पण के कारण से आदर्श नारी के रूप में महत्त्व प्राप्त हुआ है। झुनिया विधवा है तो सिलिया रखैल। इन सब को सामान्य गुण–दोषों से सम्पन्न नारियों के रूप में प्रस्तुत करने पर भी प्रेमचन्द का आग्रह सदा उन्हें श्रेष्ठ रूप में ही विकसित करने का रहा है। सरोज, मीनाक्षी आदि सब प्रेमचन्द से आदर

का व्यवहार प्राप्त करती है। अपनी सामान्य से सामान्य स्थितियों में भी नारी को आदर, सम्मान, उच्चता, श्रेष्ठता तथा ममता के पात्र रूप में देखने का प्रेमचन्द का आग्रह रहा है।

दान–दहेज नारी जीवन का बहुत बड़ा अभिशाप रहा है। इस कुप्रथा का हल्का सा संकेत 'गोदान' में सोना के विवाह के अवसर पर प्राप्त होता है। प्रेमचन्द स्वयं ब्याही जाने वाली कन्या को ही इसके लिए तैयार करते हैं। सोना स्वयं आगे बढ़कर ऐसा प्रयास करती है। जिससे उसके माता–पिता को इस उलझन में ही नहीं पड़ना पड़े। प्रश्न उठाया जा सकता है कि यहां सोना के भावी श्वसुर और पति इसके लिए तैयार हो जाते हैं। यदि ऐसा न हो तो क्या होगा। उत्तर भी सरल है यदि ज्यों महिलाएं आग्रह के साथ दहेज–कामी लोगों से सम्बन्ध बनाने से इन्कार करें और समाज ऐसे व्यक्तियों व वर्गों के प्रति उचित निरादर और अवमानना दिखाएं तो समस्या का समाधान सम्भव है। किसी नियम कानून की अपेक्षा स्वयं कन्या द्वारा उठ खड़े हो कर इस समस्या का सामना करने से ही इसका समाधान हो सकेगा, यह प्रेमचन्द का सार्थक मन्तव्य है। किसानों की समस्या प्रेमचन्द युग की प्रधान समस्या थी। भारत की जनता का बहुवर्ग देहात में रहता है और उनकी जीविका का प्रमुख साधन कृषि ही था, और आज भी है। किसान वर्ग गरीबी में फंसा हुआ और अपने दुर्भाग्य पर रोने वाला था। वह हाथ पर हाथ धरे बैठा हुआ सरकार, ज़मींदार, साहूकार, छोटे सरकारी अफसर, पुलिस, वकील और पण्डे–पुजारी आदि सभी से शोषित होता रहा है। प्रेमचन्द अपनी सभी रचनाओं में किसान के प्रति ममता और सहानुभूति जगाने तथा उसे न्याय दिखाने का उपक्रम करते हैं। 'गोदान' में यह किसान को दो ही उपाय सुझाते हैं। या तो गोबर की तरह नगर में जाकर अपने प्राण बचाओं, या गाँव में रहकर होरी की तरह अपने प्राण गंवाओ। समस्या का उल्लेख वह बहुत सूक्ष्मता तथा भाव प्रवणता के साथ करते हैं पर कल्पित समाधानों पर से उनका विश्वास अब उठ चुका था। इसलिए न वह किसी आदर्श समाधान का प्रस्ताव 'गोदान' में करते हैं न किसी प्रकार के सुनहरे भविष्य का आश्वासन ही देते हैं। गम्भीर विश्लेषण के बाद 'गोदान' का निष्कर्ष इन शब्दों में व्यक्त हुआ है : "इनका देवत्व ही इनकी दुर्दशा का कारण है। काश, ये आदमी ज़्यादा और देवता कम होते तो यों न ठुकराए जाते। देश में कुछ भी हो, क्रांति ही क्यों न आ जाए, इनसे कोई मतलब नहीं। कोई दल उनके सामने सबल के रूप में आए, उसके सामने सिर झुकाने को तैयार। उनकी निरीहता जड़ता की सीमा तक पहुंच गई है, जिसे कोई कठोर आघात ही कर्मण्य बना सकता है। उनकी आत्मा जैसे चारों ओर से निराश होकर अब अपने अन्दर ही टांगे तोड़कर बैठ गई है। उनमें अपने जीवन की चेतना ही जैसे लुप्त हो गई।" वह यही कहना चाहते हैं कि अपनी समस्या समाधान के लिए किसान को स्वयं उठना होगा दूसरा कोई विकल्प उपयोगी नहीं होगा।

पूंजीवादी व्यवस्था ने मज़दूरों की समस्या खड़ी कर दी है। प्रेमचन्द मज़दूरों के कष्ट को भी अनुभव करते हैं। 'गोदान' में मज़दूरों की दुर्दशा का बहुत यथार्थ चित्रण मिलता है। वह जानते है कि बेरोज़गारी की अवस्था में हड़ताल सफल नहीं होगी, यदि सफल हुई भी तो तालाबंदी आदि की अवस्था में फिर हानि मज़दूर की ही होगी। इसलिए वह पूंजीपति को बदलने का आयोजन करते हैं। 'गोदान' में यह कार्य चरित्रवान् व्यक्ति मेहता द्वारा करवाया गया है। खन्ना को समझते हुए वह कहता है कि "हो सकता है कि नफा कम मिलने पर आपके हिस्सेदार को अपना एक नौकर कम करना पड़े, या उसके मक्खन और फलों का बिल कम हो जाए। लेकिन वह नंगा–भूखा नहीं रहेगा। (मज़दूर) अपनी जान खपाते हैं, उनका हक उन लोगों से ज़्यादा है जो केवल रुपया लगाते हैं।"

1.5.6 सारांश :

प्रेमचन्द अपने युग के सब पीड़ितों की पीड़ा को अपने अन्तस्तल में स्थान देते है। उपन्यासों के वर्ण्य विषय के रूप में नारी की, अछूत की, किसान की मज़दूर की सत्याग्रहियों को ग्रहण करके उनकी करूणा गाथा कहने का प्रयास करते हैं। सभी प्रकार के सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक आंदोलनों को अपने लेखन का आधार बनाते हैं। मध्यवर्ग की समस्याओं पर वह विशेष ध्यान देते हैं। वह सबल को क्रियाशील और निर्बल को बल प्रदान करते हैं। असहायों की सहायता, अशरण को शरण का आश्वासन तथा पीड़ित और दलित को सहारा देकर प्रेमचन्द अपने साहित्य में अपने सम्पूर्ण युग को बांधकर उसे भी और अपने साहित्य को भी चिरस्मरणीय बना देते हैं।

पाठ संख्या–1.6

'गोदान' का उद्देश्य, महाकाव्यत्व और प्रमुख स्थलों की सप्रसंग व्याख्या

रूपरेखा

1.6.0 उद्देश्य

1.6.1 प्रस्तावना

1.6.2 महाकाव्यत्व

1.6.3 सारांश

1.6.0 उद्देश्य :

'गोदान' भारतीय किसान के जीवन–मूल्यों, परम्पराओं और संघर्षों की दारुण कथा है। प्रेमचन्द पहले ऐसे साहित्यकार हैं जो राष्ट्रव्यापी जन–चेतना और समाजवादी–सुधारवादी अवधारणा को व्यापक प्रसार देने के लिए समाज के दलित और शोषित वर्ग की वास्तविक स्थिति को प्रकट करना चाहते थे। वह स्वयं एक किसान थे और ग्रामवासी होने के कारण उनकी प्रतिभा ने भारतीय गांवों के जनजीवन, उसके अन्तर्विरोधों, वर्णों एवं जातियों के भेदों एवं विद्रोह की स्थितियों को बड़ी सूक्ष्मता से पहचाना था। उन्होंने साहित्य को जनकल्याण का माध्यम माना। वह जानते थे कि जमींदार और सामन्ती ताकतें अंग्रेजी प्रभुत्व का आधार है इसलिए राष्ट्रीय आन्दोलन की सफलता के लिए किसान–आन्दोलन आवश्यक है। उन्होंने अंग्रेजी साम्राज्यवाद और जमींदार–जागीरदारों के विरुद्ध आवाज उठाने के लिए साहित्य को माध्यम बनाया।

1.6.1 प्रस्तावना :

अपने समय को पहचानते हुए प्रेमचंद ने किसानों की समस्याओं और राजनीतिक–सामाजिक दबाव को बहुत गहराई से प्रस्तुत और विश्लेषित किया। 'गोदान' उनके इस उद्देष्य की पूर्ति करता है। उन्होंने किसानों की दुर्दषा का कारण मात्र उनकी अषिक्षा को न मान कर पूरी सामाजिक व्यवस्था को माना। उन्होंने स्वयं कहा है–''किसान इसलिए तबाह नहीं है कि वह साक्षर है बल्कि इसलिए कि जिन दषाओं में उसे जीवन का निर्वाह करना पड़ता है, उनमें बड़े से बड़ा विद्वान भी सफल नहीं हो सकता। उसमें सबसे बड़ी कमी संगठन की है, जिसके कारण जमींदार साहूकार, अहलकार सभी उस पर आतंक जमाते हैं।''

1.6.2 महाकाव्यत्व :

प्रेमचन्द ने अपने उपन्यास में एक किसान को नायक बनाया और उस पर होने वाले अत्याचार और अन्याय की कहानी लिखी। शुद्ध मानवतावादी धरातल पर एक निर्धन किसान के धैर्य, सादगी, साहस, मनोबल और जिजीविषा को प्रस्तुत किया। किसान–जमींदार संघर्ष को आधार बना कर इस सुन्दर उपन्यास की रचना की और अपने उद्देष्य में पूर्ण रूप से सफल हुए। वस्तुतः प्रेमचन्द यह मानते थे कि किसानों की जवाबदेही मुख्य रूप से जमींदारी प्रथा पर है। उन्होंने कहा है– ''भूमि उसकी है, जो उसको जोते।'' तभी उपज की शक्ति बढ़ सकती है। उन्होंने अपने उपन्यास 'प्रेमाश्रम' में निरंकुश जमींदारी–प्रथा के दुष्परिणामों का विस्तार किया और एक अन्य रचना 'रंगभूमि' में निरंकुष पूंजीवादी औद्योगिकीकरण के दुष्परिणामों का चित्रण किया। प्रेमचन्द कभी भी किसानों के मजदूर बनने के हक में नहीं थे परन्तु समय के साथ उन्होंने अपने साहित्य में परिवर्तन करना आरंभ किया। उन्होंने किसानों की हर समस्या की जड़ तक पहुंचकर उसके कारणों की खोज करने का प्रयत्न किया। अपने साहित्य में उन्होंने जितनी भी सामाजिक समस्याएं उठाई उन सब का सम्बन्ध किसानों से रहा है। 'गोदान' में उन्होंने किसान के जीवन, उसकी सोच और समस्याओं को, उसके वैयक्तिक और सामाजिक सम्बन्धों को तत्कालीन देषकालिक परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में देखा। किसान अपने समस्त जीवन और संघर्ष के साथ ऋण और पूंजीवाद से जूझता है। वह अपने जीवन के संघर्ष एवं यथार्थ की कठोरता से लड़ता हुआ जर्जर होता जाता है। शोषण तंत्र और सामाजिक व्यवस्था की समस्याओं से संघर्ष करता होरी का जीवन अत्यन्त जटिल है। वह जमींदार से भी डरता है और धर्म से भी, इसीलिए 'झूठे मरजाद' की रक्षा में अपना जीवन बर्बाद करता है। गिरते सामाजिक एवं नैतिक मूल्यों और महाजनी षिकंजे के बढ़ते प्रभाव के कारण वह कभी ऋण से मुक्त नहीं हो पाया। उसका एक ही सपना था गाय पालने का जो कभी पूरा नहीं हो पाया। वह अपने परिवार को विघटन से बचाने में लगा रहा और अंत में एक किसान से मजदूर हो गया। वह अपना पैतृक गांव छोड़ कर शहर आने पर मजबूर हो गया। प्रेमचन्द का प्रमुख उद्देष्य होरी के जीवन की सभी विषमताओं और दुर्दशाओं का सजीव वर्णन करना है।

प्रेमचन्द ने होरी को 'नरम चारा' कहकर उसके अस्तित्व के खोखलेपन को दर्षाया है। 'गोदान' का यह किसान होरी अकेला है और यही उसके जीवन की सच्चाई है। वह अषिक्षित है, निर्धन है और कमजोर है। वह चारों तरफ से जमींदार, पटवारी, दारोगा और सरकारी तन्त्र से घिरा हुआ है। वह जीवन भर जमींदार की गुलामी करता है फिर भी ऋण नहीं चुका पाता और उसकी जमीन भी छिन जाती है। वह रोग और शोकग्रस्त होकर एक मजदूर के रूप में समाप्त हो जाता है। आदर्ष और नैतिकता की घुटन, आक्रोष और स्वाभिमान सब खोखले हो जाते हैं। होरी के जीवन में न कोई उमंग है न कोई आषा। उसका वर्तमान और भविष्य सब कुछ अंधकारमय है। सारा जीवन वह कर्ज में दबा रहा और जीवन के अंत में वह शहर की ओर जाती हुई सड़क के किनारे पर मजदूरी करते हुए मर जाता है। वह मृत्यु के समय भी व्यवस्था के षिकंजे से मुक्त नहीं हो पाया। धनिया सुतली बना कर बाजार में बेचती है। होरी की मृत्यु के समय जब ब्राह्मण धनिया से गोदान के लिए पैसे मांगता है तो वह उस सुतली की कमाई में से सवा रुपया निकाल कर देती है। इस प्रसंग के माध्यम से प्रेमचन्द ने पूरी सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक और नैतिक मान्यताओं पर गहरी चोट की है। किसान के इस शोषण के विषय में डा. रामविलास शर्मा ने कहा है – ''गोदान में किसान के शोषण का रूप ही दूसरा है। यहाँ सीधे–सीधे रायसाहब के कारिन्दे होरी का

घर लूटने नहीं पहुंचते। लेकिन उसका घर लुट जरूर जाता है। यह अंग्रेजी राज के कचहरी–कानून सीधे–सीधे उसकी जमीन छीनने नहीं पहुंचते लेकिन जमीन जरूर छिन जाती है। होरी के विरोधी बड़े सतर्क हैं। वे ऐसा काम करने में झिझकते हैं जिससे होरी दस–पांच को इकट्ठा करके उनका मुकाबला करने को तैयार हो जाय। वह उनके चंगुल में फंस कर तिल–तिल कर मरता ह लेकिन समझ नहीं पाता कि यह सब क्यों हो रहा है। वह तकदीर को दोष देकर रह जाता है, समझता है, यह सब भाग्य का खेल है, मनुष्य का इसमें कोई बस नहीं।'' गोदान में होरी के माध्यम से किसान के जीवन की पीड़ा और क्षोभ का स्पष्ट चित्रण हुआ है। प्रेमचन्द का उद्देष्य होरी के जीवन की पारिवारिक मूल्य–व्यवस्था एवं अंधविष्वास का चित्रण करना है। इस चित्रण में उन्होंने परम्परा से चले आ रहे सामाजिक और धार्मिक शोषण को भी रेखांकित किया है। होरी में धर्मभीरु, रूढ़िवादी और संस्कारी है। वह कभी जातिगत सामूहिक दबाव से त्रस्त है, कहीं पुलिस और कचहरी के दमन–चक्र का षिकार है और कहीं जमींदार और सामन्ती शोषण में पिसता है।

'गोदान' में प्रेमचन्द का एक अन्य उद्देष्य गोबर के माध्यम से भारत के पिछड़े किसान को नवीन जागृति का संदेष देना है। गोबर नयी पीढ़ी का प्रतीक है जो जानता है कि जमींदार किसानों और मजदूरों के बल पर ही दान–धर्म करता है ताकि पाप का धन पचा सके। गोबर अन्याय का विरोध करता है और पिता को भी ऐसा करने को कहता है। वह नयी पीढ़ी और नए जमाने को पहचानता है। शहर जाकर उसने राजनीति के दांव–पेंच देखे हैं। वह जानता है कि हर व्यक्ति को अपना भाग्य खुद बनाना होगा, अपनी बुद्धि और साहस से अपनी समस्याओं को स्वयं हल करना होगा। किसान जब तक स्वयं जागरूक नहीं होता, उसकी नियति होरी की तरह ही रहेगी, किन्तु इसके लिए समाज के मूल्य और व्यवस्था भी पूरी तरह जिम्मेदार रहेगी।

प्रेमचन्द का उद्देष्य ग्रामीण जीवन और किसानों की समस्याओं एवं जीवन का वर्णन करना कहा जा सकता है। इस रचना में उन्होंने यथार्थ के कठोर धरातल पर चलते हुए अपने युग एवं परिवेष को समझा और उसका वर्णन किया। प्रेमचन्द मानव की भीतरी दुर्बलताओं को भी पहचाना और सभी पात्रों की मनो–दषा का भी सजीव चित्रण किया। 'गोदान' में उन्होंने किसान की दुर्दषा, उसकी मानसिक पीड़ा का वर्णन करते हुए उसके विरुद्ध होने वाले अमानवीय–षड्यन्त्रों एवं सामाजिक व्यवस्था पर निर्मम प्रहार किया है और किसान के यथार्थ रूप को प्रकट किया है।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि हिन्दी उपन्यास साहित्य में एक युगान्तकारी, युग–निर्माता एवं नव–युग के संस्थापक कलाकार के रूप में मान्य है। उनके दृष्टिकोण की गंभीरता, प्रौढ़ता और मौलिकता तथा कथा संगठन, चरित्र–चित्रण, कथोपकथन एवं भाषा–षैली की नवीनता उन्हें पूर्ववर्ती लेखकों से अलग करके युगनेता और युगप्रवर्त्तक सिद्ध होते हैं। 'गोदान' को भारतीय कृषक के जीवन का महाकाव्य कहा जाता है। भारतीय परम्परा के अनुसार लम्बे कथानक वाला, महान चरित्रों पर आश्रित, उत्कृष्ट और अलंकृत शैली में लिखित तथा जीवन के विविध रूपों और कार्यों का वर्णन करने वाला सर्गबद्ध सुखान्त काव्य ही महाकाव्य होता है। महाकाव्यत्मक उपन्यासों में महान गुणों वाले महान चरित्र, महत्त्वपूर्ण घटनाओं आदि का प्रकाषन होता है। 'गोदान' की सफलता, उसके संदेष तथा महत्त्व, उसके प्रभाव और युगान्तकारी भूमिका के कारण इसे एक महाकाव्य की संज्ञा दी जा सकती है। एक ही कथानक में सम्पूर्ण जातीय जीवन का चित्रण करना संभव नहीं होता और महाकाव्य की यह एक जरूरी शर्त होती है। 'गोदान' में कृषक जीवन का विस्तृत वर्णन है जिसमें

उसकी सभी समस्याएं चित्रित हुई हैं। इसका मुख्य पात्र होरी को महान वीर योद्धान होकर एक साधारण गरीब किसान है। इसमें कृषक जीवन की दयनीय दशा का भावपूर्ण चित्रण इतने विस्तार से हुआ है कि यह एक महाकाव्य प्रतीत होता है। शास्त्रीय दृष्टि से यह किसी महाकाव्य की शर्तों को पूरा नहीं करता परन्तु इसकी विषालता, महत्त्वपूर्ण संदेष एवं महत्व को देखकर इसे भारतीय कृषक के जीवन का महाकाव्य कहा जाता है। यह होरी के जन्म से मृत्यु तक की कहानी है जिसमें वह एक वीर योद्धा की तरह प्रत्येक परिस्थिति का मुकाबला करता रहा। अपनी भूख, गरीबी और दुर्दशा से लड़ता–लड़ता अंत में शहीद हो गया।

'गोदान' प्रेमचन्द की उपन्यास कला का शीर्ष और आधुनिक हिन्दी उपन्यास का प्रधान बिन्दु कहा जा सकता है। यह हिन्दी का नहीं, भारतीय उपन्यास साहित्य की श्रेष्ठतम रचनाओं में और विष्व के महानतम उपन्यासों में गिना जा सकता है। इसमें ग्रामीण जन तथा विषेषकर कृषक के शोषण, उत्पीड़न और दमन का यथार्थ चित्रण हुआ है। कृषक को अपनी पूरी यथार्थता, रूढ़िवादिता, विवषता, निर्धनता और अंधविष्वासों सहित चित्रित किया है। यही कारण है कि इसे कृषक जीवन का महाकाव्य कहा जा सकता है। 'गोदान' में ग्राम तथा नगर जीवन के समान्तर विकास और घात–प्रतिघात द्वारा सामन्ती व्यवस्था के पूरी तरह से टूटने, पूंजीवादी व्यवस्था के विकास, किसान के लगातार गरीब होते जाने आदि की ठोस यथार्थ की भूमि पर अभिव्यक्ति हुई है। 'गोदान' प्रेमचन्द का जीवन संचित अनुभव, उनकी कला का निखरा हुआ रूप अपनी शक्तिमत्ता के साथ सार्थक हुआ है। होरी का कुछ अपने की रूढ़ि और अंधविष्वासों और उससे अधिक सामाजिक संघर्ष की चककी में पिस जाना प्रत्येक क्षेत्र की पीड़ित कृषक की चुनौती है। 'गोदान' प्रेमचन्द की निसंदेह एक सुन्दर रचना है।

1.6.3 सारांश :

'गोदान में ग्राम्य जीवन और कृषि संस्कृति का महाकाव्य है। इसमें प्रगतिवाद, गांधीवाद और मार्क्सवाद का पूर्ण परिप्रेक्ष्य चित्रण हुआ है। नायक और नायिका के परिवार के रूप में हम भारत की एक विशेष संस्कृति जो अब समाप्त हो रही है या होने को है में भारत की मिट्टी की खुशबू निहित है।

प्रमुख स्थलों की सप्रसंग व्याख्या

इस पाठ में 'गोदान' के प्रमुख गद्य–स्थलों की सप्रसंग व्याख्या प्रस्तुत की जा रही है। इसके अध्ययन से आपको सप्रसंग व्याख्या सम्बन्धी जानकारी प्राप्त हो सकेगी। उपन्यास के मूल पाठ को अवश्य पढ़े और जिस गद्यांष की सप्रसंग व्याख्या पूछी जाए उसे इस प्रकार से करें –

1. स्थल :– ''यद्यपि अपने विवाहिता जीवन के इन बीस वर्षों में उसे अच्छी तरह अनुभव हो गया था कि चाहे कितना भी कतरब्योंत करो, कितना ही पेट–तन काटो; चाहे एक–एक कौड़ी को दांत से पकड़ो, मगर लगान बेबाक होना मुश्किल है। फिर भी वह हार न मानती थी और इस विषय पर स्त्री–पुरुष में आए दिन संग्राम छिड़ा रहता था।''

प्रसंग निर्देश :– होरी जमींदार के घर जाने की तैयारी करता है। धनिया उसे रोकती है। उसे जलपान करने को कहती है क्योंकि लौटने में घंटों लग सकते हैं। वह यह भी मानती है कि ऐसे

बार–बार जमींदार के घर जाकर खुशामद करने की जरूरत नहीं। जमींदार ने लगान तो लेना ही है। पर होरी यह मानने को तैयार नहीं होता।

व्याख्या :– धनिया एक कुशल ग्रहणी की तरह अपनी गृहस्थी चलाती है और घर खर्च में से कुछ बचा भी लेती है। पर उसे यह भी पता है कि चाहे कितना भी कर लो जमींदार का कर्ज कभी समाप्त नहीं होगा। होरी भी इस बात को जानता है और दोनों के बीच प्रायः इस विषय में झगड़ा भी होता रहता है।

इस स्थल में 'गोदान' के प्रमुख पात्र होरी और धनिया के स्वभावगत गुणों का परिचय प्राप्त होता है। लेखक ने भारतीय छोटे किसान मजदूर की दुर्दशा का बड़ा स्वाभाविक चित्रण किया है। भाषा का सुन्दर प्रयोग है और 'कतरब्योत करना', 'पेट–तन काटना' तथा एक–एक कौड़ी को दांत से पकड़ना आदि मुहावरों का सुन्दर प्रयोग भी किया गया है।

2. **स्थल :–** ''सोना उम्र से किशोरी, देह के गठन में युवती और बुद्धि में बालिका थी, जिसको उसका यौवन आगे खींचता था बालपन पीछे। कुछ बातों में इतनी चतुर कि ग्रेजुएट युवतियों को पढ़ाए, कुछ बातों में इतनी अल्हड़ कि शिशुओं से भी पीछे। लम्बा रूखा किन्तु प्रसन्न मुख, ठोढ़ी नीचे को खीची हुई, आंखों में एक प्रकार की तृप्ति, न केशों में तेल, न आंखों में काजल, न देह पर कोई आभूषण जैसे गृहस्थ के भार ने यौवन को दबाकर बौना कर दिया हो।''

प्रसंग–निर्देश :– उपन्यास के आरम्भिक भागों में होरी–परिवार तथा उसके परिवेश से सम्बद्ध अन्य चरित्रों का परिचय देने में प्रेमचन्द अपने कौशल का प्रयोग करते हैं। यथावसर वह कभी शारीरिक गठन कभी प्रकृति–स्वभाव तो कभी बोलचाल की विशेषताओं का उद्‌घाटन करके पात्र–परिचय देते जाते हैं और उस कथा गठन और पाठक के जाने–पहचाने संसार का भाग बनाते जाते हैं। यहां होरी की बड़ी पुत्री सोना का परिचय दिया गया है। सोना अपनी छोटी बहन रूपा को चिढ़ाती है कि गाय आएगी तो उसका सारा गोबर मैं ही पाथूंगी। रोती–झींकती रूपा पिता से शिकायत करती है। इसी अवसर पर बहनों की इस नोंक–झोंक में लेखक सोना के शरीर, उसके बौद्धिक स्तर उसके भाव तथा उसके वस्त्र–पहनावे का परिचय देने का अवसर निकाल लेता है। सोना की वय–सन्धि का बहुत व्यंजक परिचय यहां प्राप्त होता है।

व्याख्या :– सोना उम्र की उस अवस्था पर पहुंच चुकी है जहां उसके बचपन तथा जवानी परस्पर मिल रहे हैं। कुछ अवस्थाओं में वह युवती हो चुकी है तो अन्य बातों में अभी शिशुता का भोलापन और सहजता बनी ही हुई है। प्रकृति ने उसे सुन्दर और आकर्षक बनाया है पर परिस्थितियों का बोझा उसके यौवन को दबाए हुए है। केशों में तेल आंखों में काजल और शरीर पर आभूषणों का अभाव होने पर भी उसकी आंखों में आगत यौवन की तृप्ति का भाव है। आर्थिक अभाव दबाए हुए हैं तो चढ़ती उम्र का अपना ही विशेष सन्तोष उसके व्यक्तित्व को पूर्णता दे रहा है। कम शब्दों में संकेतों पात्र से लेखक सोना का व्यक्तित्व उद्‌घाटित करता चलता है।

3. **स्थल :–** ''एक दिन पहले तक गोबर कुमार था। गांव में जितनी युवतियां थीं वह या तो उसकी बहनें थी या भाभियां। बहनों से कोई छेड़छाड़ हो ही क्या सकी थी, भाभियां अलबत्ता कभी–कभी उससे ठिठोली किया करती थीं, लेकिन वह केवल सरल विनोद होता था। उनकी दृष्टि में अभी उसे यौवन में केवल फूल लगे थे। जब तक फल न लग जाएं उस पर ढेले फेंकना व्यर्थ

की बात थी। और किसी ओट से प्रोत्साहन न पाकर उसका कौमार्य उसके गले से चिपटा हुआ था।''

प्रसंग–निर्देश :– होरी का पुत्र गोबर जवानी की दहलीज पर पांव रख रहा है। पर गांव के सीमित परिवेश में स्त्री के नाम पर उसे अपनी माता, अपनी बहनों, ग्राम बिरादरी की बहनों तथा भाभियों के सम्पर्क में ही आने का अवसर मिला था। इसलिए गोबर शरीर व मन दोनों में अभी सचमुच कुमार ही बना हुआ था। भोला अहीर की बेटी झुनिया से उसका पहला साक्षात्कार तब होता है जब पिता के साथ वह भोला के घर भूसा छोड़ने जाता है। दूसरी भेंट में गोबर और झुनिया एकान्त में गाय लेकर आते हैं और इसी बीच दोनों में अन्तरंगता बढ़ती है और सहसा गोबर जवान हो जाता है। इस भाव को इन पंक्तियों में व्यक्त किया गया है।

व्याख्या :– झुनिया का पहला साक्षात्कार गोबर को अभिभूत करता है। वह मानों सोए से जागता है। उसकी यौवन की अभिलाषाएं मानों सोए से जाग उठती हैं। दूसरी भेंट में तो वह मानों पूरी तरह सजग–सचेत हो जाता है। कल तक वह कुमार था आज वह युवक बन चुका है। वह प्रेम का भाव और अर्थ जानने लगा है। अब तक वह केवल बहनों व भाभियों को ही जवान महिलाओं के रूप में पहचानता था। भाभियां भी उसे अभी किशोर समझ उससे विशेष छेड़छाड़ नहीं करती थीं। झुनिया से भेंट, दो युवाओं का अन्तरंग वार्तालाप और प्रबल आकर्षण उसके भविष्य के सपनों को जगा देता है, और गोबर एकाएक जवान अनुभव करने लगता है।

4. स्थल :– ''मेहता ने हथौड़े की दूसरी चोट जमाई, मानता हूं, आपका अपने आसामियों के साथ अच्छा बर्ताव है, मगर प्रश्न यह है कि नहीं। इसका कारण क्या यह नहीं हो सकता कि मद्धिम आंच में भोजन स्वादिष्ट पकता है, गुड़ से मारने वाला ज़हर से मारने वाला से कहीं अधिक सफल हो सकता है। मैं तो केवल इतना जानता हूं कि हम या तो साम्यवादी हैं या नहीं है। हैं तो उसके व्यवहार करें नहीं हैं तो बकना छोड़ दें। मैं नकली ज़िन्दगी का विरोधी हूं।''

प्रसंग–निर्देश :– रायसाहब अमरपाल सिंह के घर में मेहमानों की गहमागहमी है। नाटक के आयोजन और मेहमानों की खातिरदारी में कोई कसर नहीं रखी गई है। वकील तंखा रायसाहब की खुशामद में उनकी तारीफ के पुल बांधते हैं। कौंसिल में उनके प्रश्नों की झड़ी की प्रशंसा करते हुए कहते हैं कि अन्य सदस्य का रिकार्ड इतना शानदार नहीं होगा। दर्शन शास्त्र के प्राध्यापक मेहता इस चाटुकारी को पसन्द नहीं करते, और साफ कहते हैं कि प्रश्नों से कुछ नहीं होगा। हमारे सिद्धांत और जीवन में साम्य होना चाहिए। यह उचित नहीं कि बातें तो हम कम्युनिस्टों की सी करें, पर जीवन रईसों का जिए। वकील तंखा सीधे–सीधे रायसाहब की वकालत करते हुए अपने आसामियों के साथ रायसाहब के अच्छे व्यवहार की प्रशंसा करके उन्हें अन्य जमींदारों से भिन्न बताने का प्रयास करता है। तब मेहता हथौड़ी की दूसरी चोट करते हुए उपर्युक्त टिप्पणी देते हैं।

व्याख्या :– मेहता कहते हैं कि रायसाहब आसामियों से अच्छा व्यवहार करते हैं तो क्या वह स्वार्थप्रेरित नहीं हैं। यह तो ज़हर की अपेक्षा गुड़ देकर मारना है या मद्धिम आंच में भोजन पकाने का कुशल उपक्रम है। यह तो ऐसी चालाकी है कि स्वार्थ भी सिद्ध होता रहे और प्रशंसा भी प्राप्त होती रहे। नकली जीवन का विरोध करते हुए प्रोफसर कहते हैं कि यदि हम साम्यवादी हैं तो ऐसा व्यवहार करें अन्यथा जबानी जमा–खर्च करके झूठी वाह–वाही लूटने का प्रयास न करें।

5. स्थल :– ''होरी गंवार था। लाल पगड़ी देखकर उसके प्राण निकल जाते थे, लेकिन मस्त सांड पर लाठी लेकर पिल पड़ता था। वह कायर न था, मरना और मारना दोनों ही जानता था, मगर पुलिस के हथकण्ड़ों के सामने उसकी एक न चलती थी। बंधे–बंधे कौन फिरे, रिश्वत के

रूपये कहां से लाए, बाल–बच्चों को किस पर छोड़े, मगर जब मालिक ललकारते हैं तो फिर किसका डर? तब तो वह मौत के मुंह में भी कूद सकता है।''

प्रसंग–निर्देश :– रायसाहब के धनुष यज्ञ नाटक के बाद मनोरंजन के वातावरण में सब मेहमान हंसी मजाक कर रहे हैं कि पठान वेशधारी प्रोफेसर मेहता बन्दूक तानकर सब को डराने धमकाते हैं और फिर उसके सामने बलपूर्वक माली के अपहरण का प्रयास करते हैं। इसी समय अचानक होरी वहां आता है और भयभीत रायसाहब उसे अपने सिपाहियों को बुलाने का आदेश देते हैं। जब मेहता उसे भी बन्दूक की नोक पर रूकने का आदेश देते हैं तो वह भिड़ जाता है, औन उन्हें ज़मीन पर पटक कर उसकी वास्तविकता उद्‌घाटित कर देता है। उपर्युक्त प्रसंग में ग्राम के सरस निर्धन किसान की वीरता, शौर्य और स्वामिभक्ति के साथ–साथ ही पुलिस प्रशासन के हथकण्डों, उसके दमन–शोषण और उसके समझ इन वीर किसानों की लाचारी व बेबसी को बहुत कौशल के साथ प्रत्यक्ष किया गया है।

व्याख्या :– होरी गंवार कृषक था। एक ओर वह पुलिस से आंतकित हो जाता था, क्योंकि उसे ज्ञात था कि वह गल्त हथकण्डों में उसे उलझा कर उसका शोषण व दमन करेगी। उसे बंधे–बंधे निरपराध होते हुए भी कोर्ट कचहरी भटकना पड़ेगा। बाल–बच्चों का पेट काटकर कोर्ट–कचहरी का ख़र्चा ही नहीं, रिश्वत का भी प्रबन्ध करना पड़ेगा। पर यही वीर मस्त सांड पर लाठी लेकर पिल पड़ता था। मरना–मारना स्वामी के एक आदेश पर मौत के मुंह में भी कूद पड़ना इसकी प्रवृति है।

इस प्रसंग द्वारा प्रशासन की संकुलता, नियम–उपनियमों की जकड़न और अधिकारी वर्ग की लूट ख़सूट के समझ सहज–स्वाभाविक रूप में वीर साहसी और स्वामिभक्त व्यक्ति के भी कायर कमज़ोर तथा विवश हो जाने की प्रक्रिया का विश्वसनीय विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

6. **स्थल** :– ''इस युवती के प्रति मेरे मन में जो श्रद्धा है, वह ऐसी है कि अगर मैं उसकी ओर वासना से देखूं तो आंखे फट जायें। मैं अपने किसी घनिष्ठ मित्र के लिए भी इस धूप और लू में उस ऊँची पहाड़ी पर न जाता। और हम केवल घड़ी भर के मेहमान हैं यह वह जानती है। किसी ग़रीब औरत के लिए भी इसी तत्परता से दौड़ जाएगी। मैं विश्व–बन्धुत्व और विश्व प्रेम पर केवल लेख लिख सकता हूं, केवल भाषा दे सकता हूं, वह इस प्रेम और त्याग का व्यवहार कर सकती है। कहने से करना कहीं कठिन है। इसे तुम भी जानती हो।''

प्रसंग–निर्देश :– नाटक के बाद रायसाहब के मित्रों की दो टोलियां शिकार अभियान पर निकलती हैं। मेहता तथा मालती वन में भटक जाते हैं। वहां एक वनवासी महिला से उनकी भेंट होती है जो इन अनजान मेहमानों की प्राण–मन से सेवा में जुट जाती है। दूध गर्म करती है। पहाड़ी से धूप–लू में मालती के सिर दर्द के लिए जड़ी लाने दौड़ पड़ती है। मक्की की रोटी और मुर्गे का सालन पका डालती है। उसके स्नेह, सौजन्य, आतिथ्य और मानव–प्रेम से अभिभूत होकर मेहता गदगद भाव से प्रशंसा करते हैं। पर मालती सहज ईर्ष्या–वश इसे पसन्द नहीं करती, बल्कि उस स्त्री को डराने–धमकाने लगती हैं। इस प्रसंग में उस वन युवती के मानव प्रेम और त्याग के व्यवहार की प्रशंसा करते हुए मेहता उपर्युक्त बात कहते हैं।

व्याख्या :– मालती व्यंग्य से कहती है कि तुम अभी उसका आतिथ्य ग्रहण करोगे और रात को उसका शिकार भीअच्छा रहेगा। मेहता इस प्रकार के भाव को निन्दा–भाव से देखकर कहते हैं कि इस प्रकार की स्नेह और त्याग–पूर्ण महिला के प्रति श्रद्धा और प्रेम के भाव ही उमड़ सकते हैं, वासना नहीं। हम तो अपने निकटतम मित्रा के लिए भी वह न करें जो वह हमारे लिए कर रही है। वह यह जानती है कि हम घड़ी के मेहमान हैं और जीवन भर इससे हमारा फिर कभी कोई सम्पर्क नहीं होगा। यह स्वार्थ–वश सेवा नहीं है, वह निःस्वार्थ मानवता प्रेम है हम जिस पर लेख लिख

सकते हैं, यह भाषण दे सकते हैं पर यह उसका व्यवहार कर रही है और हम सब जानते हैं कि कहने से करना कठिन होता है।

7. स्थल :– ''दारोगी जी, घोड़े पर सवार होकर चले, तो चारों नेता दौड़ रहे थे। घोड़ा दूर निकल गया तो चारों सज्जन लौटे, इस तरह मानों किसी प्रियजन का संस्कार करके शमशान से लौट रहे हों।'' सहसा दातादीन बोले – ''मेरा सराप न पड़े तो मुंह न दिखाऊं।'' नोखेराम ने समर्थन किया। ऐसा धन कभी फलते नहीं देखा। पटेश्वरी ने भविष्यवाणी की हराम की कमाई हराम में ही जाएगी। झिंगुरी सिंह को आज ईश्वर की न्यायपरता में संदेह हो गया था। भगवान न जाने कहां है कि यह अन्धेरा देखकर भी पापियों को दण्ड नहीं देते। इस वक्त इन सज्जनों की तस्वीर खींचने लायक थी।

प्रसंग निर्देश :– होरी की गाय को उसके ही भाई ने ज़हर देकर मार दिया था, और स्वयं घर से भाग गया था। गांव चौंकीदार की रपट पर थानेदार आया और तफतीश का नाटक आरम्भ हुआ। गांव के चारों मुखिया थानेदार से मिले। दारोगा उनसे चाहता था कि एक सौ रूपया दिलवा दें, जिनमें उनका आधा भाग उन्हें मिल जाएगा। गांव के ये शोषक सोच विचार करके कुछ कम दिलाना चाहते हैं। उन्हें होरी की निर्धनता का भी विचार है। पटेश्वरी होरी की निर्धनता की बात करता है, तो एक समय तो दारोगा दया करके उसे छोड़ने को ही उद्यत हो जाता है। पर इससे इन ग्राम नेताओं को अपना लूट का माल भी जाता दिखा तो कहते हैं कि फिर हम क्या खाएंगे, हमें भी तो ऐसे अवसरों पर कुछ प्राप्ति होती है। तीस पर बात तय हुई। हीरा के घर की तलाशी की धमकी को होरी कुल की मर्यादा का विनाश मानकर कुछ भी दे–दिलाकर मामला रफादफा करना चाहता है। गांव–मुखियाओं द्वारा दिए गए उधार से तीस रूपये लेकर जैसे ही वह दारोगा की ओर बढ़ता है तो धनिया से यह नाटक और सहन नहीं होता। वह झपट कर रूपये ज़मीन पर बिखेर देती है। वह होरी, दारोगा और गांव के मुखियाओं की खूब खबर लेती है। हतप्रभ दारोगा को वहां से तो कुछ प्राप्त नहीं होता। पर वह गांव से खाली हाथ कहां जाने वाला था। सब मुखियाओं को झूठे मामले में जेल की धमकी देकर उन्हीं से पचास रुपये ऐंठ कर अपने घोड़े पर सवार होकर लौटता है। उपर्युक्त प्रसंग में मरे हुए पशु की हिस्सा बटाई करने वाले ग्राम के इन गीधों को अपना ही मांस नुच जाने पर जो प्रतिक्रिया हुई, उसी का बहुत नाटकीय तथा व्यंजक दृश्य प्रस्तुत हुआ है।

व्याख्या :– स्वयं लूट की योजना बनाकर, अपनी ओर से ही ऊँचे ब्याज पर होरी के लिए कर्ज़ की व्यवस्था करवाकर तथा उस रिश्वत में से अपने आधे हिस्से की उत्सुकता से प्रतीक्षा करनेवाले ये मुखिया जब स्वयं ही दारोगा द्वारा लुटते हैं तो उनकी वही अवस्था हुई मानों अपने किसी प्रियजन का दाह–संस्कार करके लौट रहे हों। सब अपने–अपने चरित्रा के अनुसार धर्म–ईमान की दुहाई देते हैं। आज उन्हें हराम और ईश्वर याद आ रहा है। वे अपने–अपने ढंग से दारोगा को शाप देते हैं। जबकि कुछ ही क्षण पूर्व वे इसी हराम की कमाई की हिस्सेदारी के लिए षड्यन्त्र कर रहे थे और मरे हुए कृषक को और भी मारने के नीच कर्म के सहयोगी ही नहीं, मुख्य सूत्रधार थे। ग्राम–समाज की शोषक व्यवस्था और कृषक की अज्ञानजन्य निरीहता का बहुत ही प्रभावपूर्ण चित्र यहां प्रेमचन्द प्रस्तुत करते हैं।

8. स्थल :– ''इस नई सभ्यता का आधार धन है। विद्या और सेवा और कुल और जाति सब धन के सामने हेय हैं। कभी–कभी इतिहास में ऐसे अवसर आ जाते हैं, जब धन को आन्दोलन के सामने नीचा देखना पड़ता है, मगर इसे अपवाद समझिए। मैं अपनी बात करती हूं। कोई ग़रीब औरत दवाखाने पर आ जाती है, तो घण्टों उससे बोलती तक नहीं। पर कोई महिला कार पर आ गई तो

द्वार तक जाकर उसका स्वागत करती हूँ और उसकी ऐसी उपासना करती हूँ मानो साक्षात् देवी हो।''

प्रसंग–निर्देश :– मिस्टर तंखा वकील हैं, इन्श्योरेंस एजेन्ट हैं। जब भी अवसर मिलता है, ग्राहक पटाने में जुट जाते हैं। मिर्जा खुर्शीद और मेहता की टीमों का कबड्डी मैच चल रहा है, और तंखा रायसाहब को लेन–देन में उलझा रहे थे। वह लेडी डाक्टर मालती को भी आने वाली कौंसल के चुनाव के लिए मैदान में उतरने के लिए उकसाते हैं। पर मालती साफ इन्कार कर देती है। वह अपने पास धन का अभाव, अनुभव का अभाव तथा सेवा आदि का अभाव का तर्क देकर स्वयं को रानी साहिबा के मुकाबिले में एकदम विफल प्रतियोगी मानती है। उसी अवसर पर मालती आज की सभ्यता में धन महत्व को रेखांकित करते हुए उपर्युक्त बात कहती है।

व्याख्या :– नई महाजनी सभ्यता का आधार धन ही है। सामन्ती व्यवस्था में कुल, जाति, परिवार तथा उनकी मर्यादा का महत्व होता है, पर इस व्यवस्था में धन के आगे ये सब निरर्थक हैं। कभी–कभी किसी आन्दोलन विशेष के सामने धन पराजित हो जाए, पर यह अपवाद मात्र होगा। मालती स्वयं अपना उदाहरण देकर एक धनी मरीज तथा एक निर्धन मरीज के प्रति अपने व्यवहार भेद की आत्म–स्वीकृति देते हुए यह मानती है कि धनी से अधिक प्राप्ति की आशा से ही वह ऐसा करती है। इससे ही धन का महत्व स्वतः सिद्ध है।

9. स्थल :– ''आप कहेंगे, मर्द अपने को नहीं मिटाता? औरत से ही क्यों इसकी आशा करता है? मर्द में यह सामर्थ्य भी नहीं है। वह अपने को मिटाएगा तो शून्य हो जाएगा वह किसी खोह में जा बैठेगा और सर्वात्मा में मिल जाने का स्वप्न देखेगा। वह तेज प्रधान जीव है, और अहंकार में यह समझकर कि वह ज्ञान का पुतला है, सीधा ईश्वर में लीन होने की कल्पना किया करता है। स्त्री पृथ्वी के भांति धैर्यवान् है। शान्ति–सम्पन्न हैं, सहिष्णु है, पुरूष में नारी के गुण आ जाते हैं, तो वह महात्मा बन जाता है। नारी में पुरुष के गुण आ जाते हैं तो वह कुलटा हो जाती है।''

प्रसंग निर्देश :– मिर्जा खुर्शीद मेहता से जानना चाहता है कि वह मालती से कब विवाह कर रहे हैं। मेहता को आश्चर्य होता है। वह मालती के अनेक गुणों के प्रशसक हैं उसके साथ मित्रवत रहना चाहते हैं। इस मैत्री के कारण उनके उन साथियों में इस प्रकार का भ्रम पैदा हुआ होगा। पर मेहता मालती को उस प्रकार की स्त्री मानते हैं जो अपने त्याग, अपनी बेजुबानी, अपनी कुर्बान से स्वयं को बिल्कुल मिटा कर पति की आत्मा का एक अंग बनजाती है। उपर्युक्त कथन में वह अपनी स्त्री सम्बन्धी धारणा को स्पष्ट करते हैं और पुरूष को स्त्री की अपेक्षा बहुत दीन–हीन और असमर्थ मानते हैं।

व्याख्या :– मेहता कहते हैं कि पुरूष इतना अहंकारी होता है कि वह स्त्री के समान स्वयं को मिटा ही नहीं सकता। वह यदि इस प्रकार की कल्पना करे भी तो वह सीधे परमात्मा में लीन होना चाहेगा। उसकी तुलना में स्त्री पृथ्वी के समान सब कुछ सहन करने वाली है, वह धैर्यवान है, सहनशील है, त्यागमयी है। यही उसकी श्रेष्ठता का आधार है। यदि स्त्री के ये गुण उसे सहज–स्वभाव रूप में ही विद्यमान होते हैं। पर यदि पुरूष के गुण स्त्री में आ जाए तो वह कुलटा हो जाती है।

10. स्थल :– ''मालती बाहर से तितली है, भीतर से मधुमक्खी। उसके जीवन में हंसी ही हंसी है। केवल गुड़ खाकर कौन जी सकता है और जिए भी तो वह कोई सुखी जीवन न होगा। वह हंसती है, इस लिए कि उसके भी दाम मिलते हैं। उसका चहकना और चमकना, इसलिए नहीं है कि वह चहकने को ही जीवन समझती हैं, या उसके निजत्व को अपनी आंखों में इतना बढ़ा लिया है कि

जो कुछ करे, अपने ही लिए करे। नहीं वह इसलिए चहकती और विनोद करती है कि इससे उसके कर्तव्यका भार कुछ हल्का हो जाता है।''

प्रसंग–निर्देश :– मालती का तितलीपन तो सबको दिखाई देता था, पर उसके मधुमक्खी वाले स्वभाव को अथवा मजबूरी को कम ही लोग जानते थे। इस तितलीपन पर ही खन्ना जैसे मर्द मरते थे और मेहता असन्तुष्ट थे। पर मालती का तितलीपन भी उसकी घरेलू जिम्मेदारियों को पूरा करने के लिए ओढ़ा गया आवरण था। उसका पिता, श्री कालू एक दलाल था। सेठ–साहूकारों, राजा–महाराजों में हर प्रकार के लाखों के रिश्ते–सौदे उसकी जबान से, कौशल से होते थे। खूब कमाता, खूब ऐश से जीवन जीता था। तीनों बेटियों को इंग्लैंड में शिक्षा दिलवाने की उसकी इच्छा थी। पर अभी मालती ही इंग्लैंड में थी जब वह फालिज का शिकार होकर बेकार हो गया। पर उसने जो ऐश–आराम का जीवन जीने का क्रम बनाया था, उसमें फर्क नहीं आया। शराब–कबाव, दो दो बहनों का व्यय, पूरे परिवार का खर्चा मालती के कन्धों पर था। मालती के चार–पांच सौ रूपयों में क्या हो सकता था। इसलिए बाहर से तितली बनी मालती हर प्रकार से अपने परिवार के उचित खर्चों को निभाने और सब को यथाशक्ति सन्तुष्ट रखने के लिए अन्दर से मधुमक्खी की तरह श्रम करती हैं।

व्याख्या :– मालती के जीवन में प्रत्यक्ष जो हंसी ही हंसी दिखाई देती थी बात वस्तुतः ऐसी नहीं थी उसे हंसने के भी दाम मिलते थे और उसकी उसके परिवार को सख्त जरूरत थी। चहकना ही उसके लिए जीवन नहीं था, न वह पूरी तरह आत्मकेन्द्रित ही थी। वह स्वार्थी भी नहीं थी। वह बेचारी तो दायित्व के बोझों के नीचे इतनी दबी थी कि इस चहकने से उसे उस बोझ का एहसास कुछ कम होता था, और जीने का सहारा प्राप्त होता था।

11. स्थल :– ''देवियों जब मैं इस तरह आपको सम्बोधित करता हूं, तो आपको कोई बात खटकती नहीं। आप सम्मान को अपना अधिकार समझती हैं, लेकिन आपने किसी महिला को पुरूषों के प्रति 'देवता' का व्यवहार करते सुना है? उसे आप देवता कहें तो वह समझेगा, आप उसे बना रही हैं। आपके पास देने के लिए दया है, श्रद्धा है, त्याग है, पुरूष के पास दान के लिए क्या है? वह देवता नहीं लेवता है। वह अधिकार के लिए हिंसा करता है, संग्राम करता है, कलह करता है। इसलिए मैं जब देखता हूं कि हमारी उन्नत विचार वाली देवियां उस दया और श्रद्धा और त्याग के जीवन से असंतुष्ट होकर संग्राम और कलह और हिंसा के जीवन की ओर दौड़ करती हैं और समझ रही हैं कि यही सुख का स्वर्ग है तो मैं उन्हें बधाई नहीं दे सकता।''

प्रसंग–निर्देष :– मालती के उद्योग से नगर में 'वीमन्स लीग' नामक संस्था की स्थापना हुई थी। उपर्युक्त स्थल इसी संस्था के मंच पर दिए गए प्रोफेसर मेहता के भाषण का एक अंश है। मेहता नारियों को सहज रूप में मानवीय सभ्यता के श्रेष्ठ गुणों की अधिकारी मानते हैं। नारियां आज जब अपने उस पद, दायित्व तथा अधिकार को त्याग कर पुरूषों के समान संघर्ष कलह और हिंसा के क्षेत्र में उतरना चाहती हैं तो इसे उनका विकास न कहकर ह्यास ही कहा जाएगा। उसके लिए उन्हें बधाई नहीं दी जा सकती। नारियों को सम्बोधित करते हुए 'देवियों' सम्बोधन को हम प्रतिदिन सुनते हैं यह किसी को खटकता नहीं। इसे नारियों की झूठी खुशामद माना जाता है। न इसके लिए कोई आपत्ति ही करता है। पर पुरूष को इसी प्रकार कभी भी कोई देवता नहीं कहता। वह इसका अधिकारी नहीं है। वह वास्तव में देवता या किसी को कुछ भी देने वाला न होकर उल्टा लेने वाला लेवता है। उसका जीवन संघर्ष, स्वार्थ, संग्राम और कलह का है जबकि नारियां जन्मजात रूप में ही दया, श्रद्धा और त्याग का दान करने वाली होती है। महिलाओं को पुरुषों के मार्ग पर चलने का उपक्रम वास्तव में उनका विकास न होकर उनका पतन होगा।

12. स्थल :– ''जिसे तुम प्रेम कहती हो, वह धोखा है उद्दीप्त लालसा का विकृत रूप, उसी तरह जैसे सन्यास केवल भीख मांगने का संस्कृत रूप है। वह प्रेम अगर वैवाहिक जीवन में कम हैं, तो मुक्त विलास में बिल्कुल नही है। सच्चा आनन्द, सच्ची शान्ति केवल सेवाव्रत में है। वही अधिकार का स्त्रोत है। वही शक्ति का उद्‌गम है। सेवा ही सीमेन्ट है जो दम्पति को जीवन–पर्यन्त स्नेह और साहचर्य में जोड़ रख सकता है। जिस पर बड़े–बड़े आघातों का कोई असन नहीं होता। जहां सेवा का अभाव है वहीं विवाह–विच्छेद है, परित्याग है, अविश्वास है।

प्रसंग–निर्देश :– वीमन्स लीग की सभा में प्रोफेसर मेहता नारी वर्ग के गुण, महत्व और अधिकार का विश्लेषण करके उन्हें पुरूषों से श्रेष्ठ मानते हैं। पर उनकी यह चेतावनी भी है कि नारियां यदि पुरूषों के मार्गों का अनुसरण करने का आग्रह करेंगी तो यह वस्तुतः उनका पतन होगा। उसे गृहिणी का आदर्श त्याग कर तितली का रंग नहीं पकड़ना चाहिए। इस पर मालती की बहन सरोज उतेजित होकर बीच में ही उन्हें टोक कर कहती हैं कि वे पुरूषों की सलाह नहीं मांगती। यदि पुरूष अपने विषय में स्वतन्त्र हैं तो स्त्रियां भी अपने विषय में स्वतन्त्र हैं। युवतियाँ अब विवाह को पेशा नहीं बनाना चाहतीं। वह केवल प्रेम के आधार पर विवाह करेंगी। सरोज के विवाह और प्रेम सम्बन्धी इस आग्रह का उत्तर देते हुए मेहता उपर्युक्त शब्द कहते हैं।

व्याख्या :– प्रेम और विवाह के इस विवाद में प्रेम का आधार ही सच्चा सुख और सच्चे आनन्द का आधार है। सेवा–रहित प्रेम केवल उद्‌दीप्त अभाव ही है। वह सेवा–सच्चे सुख, आनन्द और सारे अधिकारों का स्त्रोत है। इसके अभाव में ही अविश्वास, परित्याग और विवाह–विच्छेद जैसी स्थितियां उत्पन्न होती हैं।

13. स्थल :– ''अगर कोई पुरुष मेरे और मेरी स्त्री के बीच में आने का साहस करे तो मैं गोली मार दूँगा, और उसे न मार सकूँगा तो अपनी छाती में मार लूँगा। इसी तरह अगर मैं किसी स्त्री को अपने और अपनी स्त्री के बीच में लाना चाहूं तो मेरी पत्नी को भी अधिकार है कि वह जो चाहे करे। इस विषय में मैं कोई समझौता नहीं कर सकता। वह वैज्ञानिक मनोवृति है, जो अपने अपने बनैल पूर्वजों से पायी है और आजकल कुछ लोग इसे असभ्य और सामाजिक व्यवहार कहेंगे, लेकिन मैं अभी तक इस मनोवृति पर विजय नहीं पा सका और न पाना चाहता हूँ। इस विषय में मैं कानून की परवाह नहीं करता। मेरे घर में मेरा कानून है।''

प्रसंग–निर्देश :– मेहता और मालती के बीच खन्ना और उनकी पत्नी गोबिन्दी के सम्बन्धों की चर्चा चल रही है। मेहता को क्रोध है कि खन्ना अपनी गोबिन्दी को पीटते हैं। वह मालती से भी नाराजगी ज़ाहिर करते हैं कि उसने कभी खन्ना को समझाने की कोशिश नहीं की, जबकि वह ऊपर से नारी–वर्ग का हितैषी बनता है। इस पर मालती दबे रूप में खन्ना को ही हिमायत करके कहती है कि गोबिन्दी बदजबान है और मालती को बदनाम करने व उस पर आघात लगाने के लिए जो–जो कुछ किया है वह सब देखा जाए तो उस स्त्राी के साथ यहीं व्यवहार उचित है। मेहता जब मालती से गोविन्दी के इस द्वेष का कारण जानना चाहता है तो वह तुनक कर उत्तर देती है कि यह गोविन्दी से पूछा जाए। तब मेहता उपर्युक्त तर्क देकर कहता है कि इससे पूछने की आवश्यकता नहीं, यह बिना पूछे ही जाना जा सकता है। अर्थात् जब तुम खन्ना व गोबिन्दी के बीच में आना चाहेगी तो यह उसकी सहज स्वाभाविक प्रतिक्रिया होगी।

व्याख्या :– पुरूष और स्त्री के बीच तीसरे का आ जाना दम्पति को असहय होता है। पति–पत्नी के बीच दूसरे पुरूष का आ जाना जिस प्रकार पुरूष को असह्य होता है उसी प्रकार दूसरी स्त्री का आ जाना पत्नी के लिए असह्य होगा। नियम–कानून जो भी कहे यह मानव की आदिम कृति है और

उसमें समझौता असम्भव है। इस प्रकार मालती का खन्ना व गोबिन्दी के बीच में आने का प्रयास या आने का आभास भी गोबिन्दी को असह्य है, यह एकदम उचित है।

14. स्थल :– ''वह पुरूष को खिलौना नहीं है न भोग की वस्तु, फिर क्यों आकर्षक बनने की चेष्टा करें?'' अगर पुरूष उसका सौन्दर्य देखने के लिए आंखें नहीं रखता कामनियों के पीछे मारा–मारा फिरता है तो वह उसका दुर्भाग्य है। वह उसी प्रेम और निष्ठा से पति की सेवा किए जाती है जैसे द्वेष और मोह जैसी भावनाओं को उसने जीत लिया है। और यह अपार सम्पत्ति तो जैसे एसकी आत्मा को कुचलती रहती है। इन आडम्बरों और पाखण्डों से मुक्त होने के लिए उसका मन सदैव ललचाया करता है।''

प्रसंग–निर्देश :– खन्ना की पत्नी गोविन्दी को लगातार पति से यातना, प्रताड़ना, अपमान मिलता है। वह घर से बाहर जितना मीठा और कोमल है, घर में उतना ही कर्कश, कटु और उद्दण्ड। पर गोविन्दी उसके साथ अपना सम्बन्ध केवल भोग का नहीं मानती। यही कारण है कि वह द्वेष, मोह आदि से ऊपर होकर पूरी निष्ठा और समर्पण के साथ पति सेवा में संलग्न रहती थी। यही समर्पण भाव उसे धन, सम्पति आदि से विरक्त करता जा रहा था। इन पंक्तियों के द्वारा न केवल गोबिन्दी और खन्ना के चरित्रों का परिचय ही प्राप्त होता है, बल्कि दाम्पत्य सम्बन्धों में धन की अनिष्टकारी भूमिका भी रेखांकित होती है।

व्याख्या :– गोविन्दी स्वयं को पुरुष का खिलौना मात्र नहीं मानती। वह स्वयं को शारीरिक आकर्षण और भोग की वस्तु नहीं मानती, यही कारण है कि वह सौंदर्य प्रसाधन और आकर्षक बनने का प्रयास नहीं करती। वह पति प्रेम और निष्ठा के सम्बन्ध को ही वास्तविक मानती है, कामनियों के प्रति पति का आकर्षण और अपनी उपेक्षा को वह उसी का दुर्भाग्य मानती है, द्वेष और मोह को मानो उसने जीत लिया है। धनि अतिरेक से उसे आत्मिक कष्ट होता है, तथा वह आडम्बरों और पाखण्डों से मुक्त होने के लिए सदा प्रयासरत रहती है।

15. स्थल :– ''लेकिन मैं समझता हूँ कि नारी केवल माता है और उसके उपरान्त वह जो कुछ है, वह सब मातृत्व का उपक्रम मात्र है। मातृत्व संसार की सबसे बड़ी साधना, सबसे बड़ी तपस्या, सबसे बड़ा त्याग और सबसे महान् विजय है। एक शब्द में मैं एसे जय कहूंगा – जीवन का, व्यक्तित्व का और नारीत्व का भी।''

प्रसंग निदेश :– खन्ना से लगातार पीड़ित, अपमानित और प्रताड़ित होकर गोविन्दी घर छोड़ने तक को बाध्य होती है। तभी उसकी भेंट मेहता से होती है। मेहता उसकी महानता, उसकी निष्ठा, उसके त्याग तथा उसके मातृत्व की प्रशंसा करता है। गोविन्दी कहती है कि वह घर अब उसका नहीं रहा जहां उसे केवल ताड़ना और अपमान ही मिलता है। वह उसके मातृत्व की स्मृति दिलाता है। तो गोविन्दी कहती है कि वह नारी भी तो है। उसी अवसर पर मेहता नारीत्व का चरम रूप केवल मातृत्व बताते हुए उपर्युक्त टिप्पणी करते हैं।

16. स्थल :– ''यह तो पांच ही हैं मालिक। पांच नहीं दस हैं।'' ''घर जाकर गिनना'' ''नहीं सरकार पांच हैं।'' ''एक रूपया नजराने का हुआ कि नहीं?'' ''हा सरकार।'' ''एक तहरीर का?'' ''हां सरकार''। ''एक दस्तूरी का?'' ''हा सरकार''। ''एक सूद का''? ''हा सरकार।'' ''पांच नगद दस हुए कि नहीं'' ''हां सरकार। ''अब यह पांचों भी मेरी ओर से रख लीजिए।'' ''कैसा पागल है?'' नहीं सरकार? एक रुपया छोटी ठुकराईन के पान खाने को एक बड़ी ठकुराईन के पान खाने को बाकी बचा एक, वह आपकी क्रियाक्रम के लिए।''

प्रसंग निर्देश :– गोबर नगर से ग्राम वापिस आता है। गोबर के माध्यम से ग्राम के दलित पीड़ित और शोषित किसान युवकां को मानों जबान मिल गई है। होली के अवसर पर ग्राम के शोषकों के

स्वांग भरने का आयोजन होता है। हजारों लोग गोबर के घर के सामने इकट्ठे होते हैं। वहां बारी–बारी से सब शोषकों की नकल लगाई जाती है। यह है तो नाटक ही, पर इसमें यथार्थ की गहरा रंग तीखे व्यंग्य के साथ उद्घाटित होता है। पहली नकद झिंगुरी सिंह की लगाई जाती है, जिस में उसको अपनी पहली और दूसरी ठकुराईन के साथ अपने यथार्थ रूप में प्रदर्शित किया गया है।

व्याख्या :– एक किसान ठाकुर के पास दस रूपया उधार लेने जाता है। बहुत गिड़गिड़ाने पर ठाकुर कर्ज़ देने को राज़ी हो जाता है। कागज दस रूपये का लिखा जाता है। पर वास्तव में वह पाँच की रुपये देता है। दस्तूरी, कागज़, लिखाई, अग्रिम ब्याज, नज़राने आदि में पांच रूपया काट कर वह पाँच ही देकर दस लिखता है। इस पर किसान गहरा व्यंग्य करते हुए चार रूपये तो छोटी और बड़ी ठकुराईन के लिए अपनी ओर से पान तथा नज़राने के रूप में प्रस्तुत करके अन्तिम पाँचवा रूपया सूदखोर शोषक ठाकुर के क्रियाकर्म के लिए पेश करता है। इसमें तीखा व्यंग्य और दबा आक्रोश अपने उग्र रूप में व्यक्त हुआ है, जो सब शोषित जनों की भावनाओं को अभिव्यक्ति देने का ही यथार्थ उपक्रम है। कथोपकथन की चुस्त शैली इस प्रसंग को और भी तीखा और पैना बना देती है।

17. स्थल :– ''मुझे आपसे कोई शिकायत नहीं है खन्ना जी। आप भी इस काम में नहीं शरीक होना चाहते, न सही, लेकिन कभी न कभी ज़रूर आएंगे। लक्ष्मीपतियों की बदौलत ही हमारी बड़ी–बड़ी संस्थाएँ चलती हैं। राष्ट्रीय आन्दोलन को दो–तीन सालतक किसने इतनी धूमधाम के साथ चलाया। इतनी धर्मशालाएँ और पाठशालाएँ कौन बनवा रहा है। आज संसार का शासन सूत्र बैंकरों के हाथ में है। सरकार उनके हाथ का खिलौना है। मैं भी आपसे निराश नहीं हूं।''

प्रसंग निर्देश :– नगर में महिलाओं के लिए एक व्यायाम–शाला बनवाने का आयोजन हो रहा है। खूब जोर–जोर से चन्दा इकट्ठा किया जा रहा है। मेहता रायसाहब से मिलते हैं उन्हें वह सूची दिखाते हैं जिसमें कुंवर दिग्विजय सिंह ने तीन हजार और राजा सूर्यप्रताप सिंह ने पाँच हज़ार दिया था। राय साहब इन दिनों बहुत बड़ी आर्थिक समस्या में हैं। पर प्रतिद्वन्द्वियों की चन्दा राशि देखकर वह भी स्वयं पांच हज़ार रूपया लिख देते हैं। जबकि मेहता उनके नाम केवल दो हज़ार लिख रहे थे। इसे वह अपनी हेठी समझते हैं। पर खन्ना काबू में नहीं आ रहे थे। मेहता उन्हें प्यार–दुलार खुशामद सब करके हार गए। अन्त में मेहता यही कहते हैं कि हम इसका शिलान्यास गोविन्दी जी से करवा रहे हैं। आप आईएगा तो अवश्य। इस तरह खन्ना को एक दुविधा की स्थिति में डाल दिया जाता है।

व्याख्या :– खन्ना के गुणों को जागृत करने का प्रयास करते हुए मेहता कहते हैं कि आज नहीं तो कल, आप इस दिशा में अवश्य आएंगे। हमारे सारे आयोजन, सारी बड़ी संस्थाएं धनपतियों के सहयोग पर ही चलती हैं। सारे राष्ट्रीय आन्दोलन को चलाने में भी लक्ष्मीपतियों का विशेष योगदान रहा है। संसार भर का सारा शासन–सूत्र, सारी सरकारें बैंकरों के इशारे पर ही चलती हैं। अर्थात् अब सामन्तवाद समाप्त हो रहा है। नई पूंजीवादी व्यवस्था में आप लोग ही शक्ति के स्त्रोतों को हाथ में लेंगे। इसलिए हम अभी आपकी ओर से निराश नहीं हुए हैं।

18. स्थल :– ''जब हम अपने किसी प्रियजन पर अत्याचार करते हैं और जब विपत्ति आ पड़ने में हम में इतनी शक्ति आ जाती है कि उसकी तीव्र व्यथा का अनुभव करें तो उससे हमारी आत्मा में जागृति का उदय हो जाता है और हम बेजां व्यवहार का प्रायश्चित करने के लिए तैयार हो जाते हैं। गोबर उसी प्रायश्चित के लिए व्याकुल हो रहा था। अब उसके जीवन का रूप बिल्कुल दूसरा होगा। जिसमें कटुता की जगत् मृदुता होगी, अभिमान की जगह नम्रता।''

प्रसंग निर्देष :– दोबारा शहर लौटने पर गोबर का कारोबार नहीं जम पाता। उसके पुत्रा की भी मृत्यु हो चली है। झुनिया आर्थिक तंगी के अलावा पुत्र शोक में भी डूबी है ही, गोबर भी उसके साथ दुर्व्यवहार करता है। उसे मारता–पीटता है, और स्वयं भी अनियंत्रित जीवन जीता है। पर मिल की हड़ताल के दौरान मारपीट में गोबर का बुरा हाल हो जाता है। उस समय झुनिया के सहयोग से और झुनिया की सेवा के कारण उसके प्राण ही नहीं बच जाते, उसका मन भी पूरी तरह स्वस्थ हो जाता है। जब अपने पूर्व कृत्यों के लिए पश्चाताप करना चाहता है। वह दुनिया में सेवा के महत्व को समझने लगता है।

व्याख्या :– अन्य पर अत्याचार करने पर तो हम उसे भूल भी जाते हैं और उसका औचित्य भी ढूंढ निकालते हैं। पर अपने अत्याचार करने पर जब किसी विशेष परिस्थिति में हमारी आत्मा जागती है तो हमें उस व्यथा की अनुभूति होती है। तब प्रायश्चित किए बिना हमें चैन नहीं मिलता। इसी प्रकार के क्षण में गोबर प्रायश्चित के लिए व्याकुल है। वह निर्णय करता है कि अब आगे वह कटुता और अभिमान के स्थान पर मधुरता और नम्रता का व्यवहार करेगा। उसे इसके महत्व, इसके दुलर्भ होने तथा बड़े सौभाग्य से मिलने का अब पूरा बोध हो जाता है।

19. स्थल :– ''होरी ने रूपये लिये तो उसका हाथ काँप रहा था उसका सिर ऊपर न उठ सका मुँह से एक शब्द न निकला, कैसे अपमान के अथाह गढ़े में गिर पड़ा है और गिरता चला जाता है। और ऐसे परास्त हुआ है कि मानो उसको नगर के द्वार पर खड़ा कर दिया गया है, और जो जाता है उसके मुँह पर थूक देता है। वह चिल्ला–चिल्ला कर कह रहा है भाइयों मैं दया का पात्र हूं। मैनें नहीं जाना, जेठ की लू कैसी होती है और माघ की वर्षा कैसी होती है। इस देह को चीर कर देखो इसमें कितना प्राण रह गया है। कितना जख्मों से चूर, कितना ठोकरों से कुचला हुआ इससे पूछों कभी तूने विश्राम के दर्शन किए, कभी तू छांह में बैठा? उस पर यह अपमान। और वह अब भी जीता है, कायर, लोभी, अधम। उसका सारा विश्वास जो अगाध होकर स्थूल और अंधा हो गया था, मानो टूक–टूक उड़ गया है।''

प्रसंग–निर्देश :– परिस्थितियों से लड़ते–लड़ते होरी की अब यह हालत होती है कि छोटी बेटी रूपा के विवाह के लिए उसे अपने भावी जमाता राम सेवक से धन लेना पड़ता है। वह इसे मजबूरी से लिया गया उधार ही मानता है, और मन में यही निर्णय करता है कि हाड़–तोड़ परिश्रम द्वारा उसकी पाई–पाई चुका देगा। पर ऐसा कहां सम्भव था। इसलिए आज मानो बेटी बेचने की घोर मनोव्यथा में होरी तड़प रहा था; और जीवन में प्रथम बार पूरी तरह परास्त अनुभव कर रहा था।

व्याख्या :– अपमान, आत्मग्लानि और पराजय का जितना तीखा बोध होरी को आज हुआ, वैसा इससे पूर्व कभी नहीं हुआ था। उसे यही अनुभव हुआ मानो सारी दुनिया उस पर थूक रही हो। वह आत्म–विश्लेषण करके स्वयं को अपराध का नहीं, दया का पात्रा मानता है। वह जीवन पर्यन्त किए गए अथक परिश्रम की याद करता है। वह खाई हुई ठोकरों और भोगी हुई यातनाओं को याद करता है। वह इस अपमान का पात्र स्वयं को नहीं मानता फिर भी परिस्थितिवश ऐसा हुआ तो है ही, स्वयं को कायर, अधम और लोभी मानता है, और मृत्यु की कामना करता है।